सं०-१६१
सं० १६१
उपमन्यु वंशावली

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
		वसिष्ट, कनिष्ट, ज्येष्ट	वसिष्ठ, कनिष्ठ, ज्येष्ठ
४	२१	द्रविड	द्राविड़
„	२३	ब्राह्यण	ब्राह्मण
„	२४	कान्यकुब्ध	कान्यकुब्ज
५	७	ब्राह्यणोंमें	ब्राह्मणोंमें
६	१२	कौण्डित्य	कौण्डिन्य
„	१४	गात्र	गोत्र
९	१९	कान्यकुन्जों	कान्यकुब्जों
१०	१५	जम्म	जन्म
११	११	कान्वकुन्जों	कान्यकुब्जों
„	१४	चोवे	चौबे
१२	२	आस्मघात	आत्मघात
„	१८	प्रहण	ग्रहण
१३	१७	ईक्ष्वाकु	इक्ष्वाकु
१४	१७	श्रीमद्भागवत्	श्रीमद्भागवत
१५	७	नापश्वन्	नापश्यन्
१६	१२	सूर्ययंशका	सूर्य वंशका
„	१४	व्रह्यातकने	ब्रह्मातकने
„	१७	सुदक्षिणका ग्रन्थबन्धन	सुदक्षिणाका ग्रन्थिबन्ध
१७	४	सप्तर्षीणामगस्त्यष्ठमानां	सप्तर्षीणामगस्त्याष्टमानां
„	७	अमस्त्य	अगस्त्य
„	१४	यैरग्निर्व्रीयते	यैरग्निर्व्रियते
१९	१७	तस्पर	तत्पर

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२३	२१	अन्धे	अन्धे
२४	१७	औपमम्यव	औपमन्यव
२५	८	रक्षांसित्येके	रक्षांसीत्येके
२७	८	सन्तुष्ठ	सन्तुष्ट
२९	९	सामाश्रीमका	सामाश्रमीका
"	१०	वेदशब्द	वेदः शब्दः
३०	१४	विभाम	विभाग
"	१९	आत्मबोघ	आत्मबोध
३४	५	तैत्तिरय	तैत्तिरीय
३७	९	प्रायक्षित्त	प्रायश्चित्त
३८	३	कौयमी	कौथुमी
३९	१६	वैविक	वैदिक
"	२४	स्थापस्य	स्थापत्य
४३	८।१०	ऊध्वर्यु	अध्वर्यु
४४	१४	अग्नीघ्र सुब्रह्मण्य	अग्नीध्र सुब्रह्मण्य
४५	५	आनम्दसे	आनन्दसे
४८	२४	पादुपाल	पायुनाल
४९	११	आह्विक	आह्विक
"	१४	प्र्रेषमंत्र	प्रेषमंत्र
५०	१	घड़े	घड़े
"	१४	मध्वाह्नस्वन	मध्याह्नसवन
५१	२९	इस्यादि	इत्यादि
५२	२	वोलीमें	बोलीमें
"	१८	मुजवल	भुजवल
५[illegible]	१९	खर्गको	स्वर्गको

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५६	५	वदकर	बदकर
५९	१७	यजभानकी	यजमानकी
६५	१४	आवस्थ्यं	आवसथ्यं
,,	१९	नाम्रा	नाम्ना
६६	९	लोलपराशराख्यो	लोलपराशराख्यौ
,,	२३	द्विमार्यस्य	द्विभार्यस्य
६८	१६	वंशौकरौ	वंशकरौ
७३	१३	तस्थाथ	तस्याथ
,,	१६	जगतस्तृतीयः	जगनस्तृतीयः
७४	१	कन्दनस्यात्मा	कन्दनस्यातमजा
७५	२२	सुतानब्रुवे	सुतान् ब्रुवे
८०	४	विपू	भिट्ठ
,,	१३	जावाजीसे	जानाजीसे
,,	२०	पढ़ी	पडी
८१	११	साम्प्रितं	साम्प्रतं
८२	१४	षष्टः	षष्ठः
८४	२३	पुनराह्वादसंज्ञकः	पुनराह्लादसंज्ञकः
८५	३	द्वावनिरुद्धघरो	द्वावनिरुद्धधीरौ
९१	१४	इत्युपमन्युवंशवल्यां	इत्युपमन्युवंशावल्यां
९९	१२	विप्राम्परिवेषणे	विप्राणाम्परिवेषणे
१०२	८	वभूव	बभूव
११०	१०	स्वग्रहेऽधुना	स्वगृहेऽधुना
,,	१६	लधुपत्न्यान्तु	लघुपत्न्यान्तु
११७	१३	वहा	वहां
११९	१७	जहां	वहां

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११९	२२	पाँचवी	पाँचवीं
१२३	१४	ब्राह्मणोंका	ब्राह्मणोंको
१२५	११	कीत्तिप्रकाश	कीर्त्तिप्रकाश
१२६	११	नामोसे	नामोंसे
,,	१२	जिह्वाग्र	जिह्वाग्र
१३१	१६	वे	ये
१३६	९	कुटुम्वीजनोंपर	कुटुम्बीजनोंपर
,,	२४	लोकोंको	लोगोंको
१३८	१९	गद्दा	गद्दी
१३९	२१	ंहै	है
१४०	१२	दिनो	दिनों
१४१	२३	वैंकमें	बैंकमें
१४२	१३	अनुफूल	अनुकूल
१४३	१०	श्रीसम्पूर्णानन्वजोकी	श्रीसम्पूर्णानन्दजीकी
१४७	८	मी	भी
१८५	६	लल्मीनारायण	लक्ष्मीनारायण

विषय-सूची

प्रस्तावना

ब्राह्मणोंका दशविध विभाग कबसे हुआ इसका अबतक सन्तोषजनक निर्णय नहीं हुआ। पुराणोंमें इसका उल्लेख न होनेसे इसे पुराणोत्तर मानना अनिवार्य है। किसी किसीका मत है कि श्रीशङ्कराचार्यने ब्राह्मणोंका विभाग किया था। पर इसका भी कोई प्रमाण नहीं है। जो हो, पहले वेदों और उनकी विभिन्न शाखाओंके पठन-पाठनसे ब्राह्मणोंमें भेद उत्पन्न हुए और तदुपरान्त गोत्रोंद्वारा। प्राचीन ताम्रपत्र और दान-पत्रोंसे इसका समर्थन होता है। यद्यपि गोत्र कोई नवीन वस्तु नहीं है, तथापि वैदिक अख्यायिकाओंसे जाना जाता है कि गोत्र भी बदलते थे और इसी लिये एक गोत्रका मनुष्य दूसरे गोत्रका हो जाता था। कभी कभी दो गोत्र भी किसीके होते थे। परन्तु पीछे गोत्रोंकी व्यवस्था ठीक हो जानेसे साधारणमें एक ब्राह्मणसे दूसरे ब्राह्मणका भेद बतानेवाले ये गोत्र ही रह गये।

एक समय था जब ब्राह्मण ब्राह्मणके यहीं नहीं, अन्य वर्णोंके यहाँ भी भोजन तो करते ही थे, उनसे विवाह भी कर लेते थे। बाणभट्टके भाई पारशव—शूद्राके पुत्र थे। राजशेखर कविने लिखा है कि 'मेरी पत्नी चाहमान क्षत्रिय कुलकी थी।' इससे जाना जाता है कि ६०० ईस्वीमें ब्राह्मण शूद्रासे और १०५० ईस्वी

तक क्षत्रियासे ब्याह कर लिया करते थे। परन्तु ब्राह्मणोंका सहभोज छूटे भी बहुत समय हो गया और जब सहभोज गया तो उसके साथ ही परस्परके विवाह सम्बन्ध भो छूट गये। कुमारिल भट्टके ही नहीं, श्रीशङ्कराचार्यके समयतक वैदिक व्यवस्थाके विरोधियों—बौद्धों और जैनोंका प्राबल्य था और उसी समय मुसलमानोंके भी पैर भारतमें जमने लगे थे। इस लिये श्रीशङ्कराचार्यने यदि दशविध ब्राह्मणविभाग इस अभिप्रायसे किया हो कि इससे वैदिक परम्पराको कुछ तो रक्षा होगी ही, क्योंकि परिचितोंसे लोगोंका व्यवहार होगा और इस प्रकार वे वैदिक परम्परासे न हट सकेंगे, तो आश्चर्य नहीं। काशी-केदारमाहात्म्यके सिवा हमें किसी संस्कृत ग्रन्थमें दशविध ब्राह्मणविभागका पता नहीं मिला और इसमें भी जो लिखा मिला, वह ऐतिहासिक नहीं कहा जा सकता। श्रीशङ्कराचार्यके समय या उसके कुछ आगे पीछे ब्राह्मणोंका विभाग हुआ होगा इस अनुमानका एक कारण यह भी है कि ९१६ ईस्वीतक कान्यकुब्ज देश महोदय नामसे ही प्रसिद्ध था। फलतः मुसलमानी राजत्वकी स्थापनाके साथ ही दशविध ब्राह्मणोंकी कल्पना बद्धमूल होना ही बहुत सम्भव है। इसीसे प्राचीन वंशावलियोंमें पुरुषोंके वैदिक कर्मों और यज्ञयागादिसे सम्बन्ध रखनेवाली पदवियों वा उपाधियोंका उल्लेख तो पाया जाता है, पर यह कहीं लिखा नहीं मिलता कि अमुक सारस्वत था अथवा गौड़। हाँ, यह तो लिखा है कि अमुक उत्कलमें गया और अमुक गौड़ देशमें।

एक गोत्रके मनुष्योंके अनेक देशोंमें बस जानेके कारण

ही आज गौड़, उत्कल आदि देशोंमें भी प्रायः सभी गोत्रोंके ब्राह्मणोंका पता लगता है। इससे भी दशविध ब्राह्मणभेद देशान्तरवासका कारण प्रतीत होता है। हमारा उपमन्यु गोत्र कान्यकुब्जोंका ही नहीं है। कलकत्तेमें मधुसूदन नामक हमारा जो घाटिया था, उसका गोत्र भी उपमन्यु ही था। अन्य प्रदेशों में भी उपमन्यु-गोत्री ब्राह्मण होंगे। इसी वंशावलीसे जाना जाता है कि एक सज्जन गौड़ देशके मलिपुरा ग्राम और दूसरे उत्कलमें जा बसे थे। अवश्य ही आज ये अपनेको गौड़ और उत्कल वा उड़िया कहते होंगे। धीरे धीरे जब दशविध ब्राह्मण भेद बद्धमूल हो गया, तब जो एक प्रदेशसे दूसरे प्रदेशमें गये, वे अपना परिचय अपने पूर्व स्थानसे ही देने लगे। जैसे महाराष्ट्रमें जो सारस्वत ब्राह्मण बसते हैं और नामों, भाषा तथा आचार विचारमें महाराष्ट्र हो भी गये हैं, वे आजतक गौड़-सारस्वत नामसे अपना परिचय देते हैं। इसी प्रकार अलमोड़ेमें जो महाराष्ट्र बसे हुए हैं, उनकी भाषा और नाम तो उत्तरवालोंकेसे हो गये, पर नामके अन्तमें 'पन्त' शब्द रहनेसे हम पहचान लेते हैं कि वे वास्तवमें महाराष्ट्र ब्राह्मण हैं। इनमें जिनकी अल्ल वा पदवी जोशी है, उन्हें पहचाननेमें कुछ कठिनाई होती है सही, क्योंकि महाराष्ट्रोंमें तो जोशी होते ही हैं, पर अलमोड़ेके कुछ जोशी अपनेको कान्यकुब्ज कहते हैं। ऐसे ही बरारमें बहुतसे कान्यकुब्ज रहते हैं, जिनकी कई पीढ़ियाँ वहीं बीत गयी हैं। ये अपनी उपाधियां तो जानते हैं और अपनेको पांड़े वा शुक्ल कहते भी हैं, पर यह नहीं बता सकते कि कहाँके पांड़े वा

शुक्ल हैं और कान्यकुब्जके किस स्थानसे उनके पूर्वज वहाँ गये थे। इसके विपरीत बंगालके मलियाड़ा और मेदिनीपुर जिलेके गड़बेता तथा अन्यान्य जिलोंमें बहुतसे कान्यकुब्ज दो तीन सौ वर्षोंसे बसे हुए हैं, जो अपनी छ सात पीढ़ियोंके नाम ही नहीं बता सकते, अपने वंशोंका पूरा ब्योरा जानते हैं और बता सकते हैं कि उनके घरका कौन पहले पहल बंगाल पहुँचा था। इन कान्यकुब्जोंको उनसे भिन्न समझना चाहिये, जो महाराज आदिशूरके समयमें कान्यकुब्जसे गये हुए पाँच ब्राह्मणों—भट्टनारायण, दक्ष, श्रीहर्ष, छन्दद और वेदगर्भकी सन्तान आज बनरजी, चटरजी, मुखरजी आदि नामोंसे प्रसिद्ध हैं। परन्तु मलियाड़ा, गड़बेता आदिमें बसे हुए कान्यकुब्जोंका उनके मूल-स्थानोंसे सम्बन्ध विच्छिन्न हो जाने और फिर जुड़नेका कोई रास्ता न निकलनेके कारण वे उत्तरोत्तर बंगाली होते जा रहे हैं।

भारतवर्षके ब्राह्मणोंके दो मुख्य भेद हैं एक गौड़ और दूसरा द्राविड़ और इन्हो दोनोके अन्तर्गत शाकद्वीपियोंको छोड़कर प्रायः सबका समावेश हो जाता है। विन्ध्य-पर्वतके उत्तरके ब्राह्मणोंकी संज्ञा गौड़ और दक्षिणवालोंको द्राविड़ है। गौड़ोंमें पश्चिमसे पूर्वकी ओर क्रमशः सारस्वत, कान्यकुब्ज, गौड़, मैथिल और उत्कल हैं और द्राविड़ोंमें पूर्वसे तैलङ्ग, द्रविड़, कर्णाटक, महाराष्ट्र, और गुर्जर हैं। देशों वा प्रदेशोंके नामोंपर वहाँके रहनेवालोंके नाम हैं और इसी कारण सारस्वत प्रदेशमें रहनेवाले ब्राह्मण सारस्वत, तथा कान्यकुब्जमें रहनेवाले कान्यकुब्ध, गौड़के रहनेवाले गौड़,

मिथिलाके निवासी मैथिल और उत्कलके उत्कल कहलाये।

जैसा ऊपर कहा गया है, किसी समय तो ब्राह्मण ब्राह्मणेतर वर्णोंके यहाँ भी सम्बन्ध करते थे। परन्तु बादको एक प्रदेशके ब्राह्मण के यहाँ भी अन्य प्रदेशके ब्राह्मणका भोजन तक बन्द हो गया, यद्यपि सारस्वत ब्राह्मण अपने यजमान खत्रियोंके यहाँ और गौड़ ब्राह्मण अपने यजमान वैश्योंके यहाँ कच्ची-पक्की दोनो खाते हैं। उत्तरके ब्राह्मणोंमें अपने देश वा प्रदेशके ब्राह्मणके ही साथ खानेकी चाल है। द्राविड़ ब्राह्मणोंमें द्राविड़, कर्णाटक, तैलङ्ग और महाराष्ट्रका सहभोजन होता है, पर गुर्जरका नहीं। वैसे उत्तरके चारो ब्राह्मण कान्यकुब्जके यहाँ पक्की रसोई खा सकते हैं, परन्तु कान्यकुब्जोंके लिये यह नियमानुसार सम्भव नहीं कि वे दूसरे ब्राह्मणके यहाँका पका हुआ अन्न खायँ। और तो क्या वे ऐसे कान्यकुब्जके यहाँ भी नहीं खा सकते, जिससे उनकी नातेदारी न हो। उनका सिद्धान्त है जिसको बेटी नहीं, उसकी रोटी नहीं। कोई ५० वर्षोंसे कान्यकुब्ज सभाएँ सह-भोजनके प्रस्ताव पास कर रही हैं, पर इनका फल प्रायः नहीं हुआ। हाँ, नयी सभ्यताके अनुसार भोजनके नियमोंमें उच्छृ-ङ्खलता अवश्य आ गयी है।

कान्यकुब्ज ब्राह्मणोंमें सहभोजकी इस कमीके कारण लोगोंने 'आठ कनौजिया नौ चूल्हे' कहावत बना ली है अर्थात् एक कनौजिया दूसरे कनौजियेके चूल्हेकी आग लेनातक पसन्द नहीं करता। कोई कोई यहाँतक भी कहते हैं कि कनौ-जिये नाईके हाथकी पूरी खाते हैं, पर अपने भाई कनौजिये की नहीं और उदाहरणमें कहते हैं कि एक कनौजिया देवता

बैठे भोजन कर रहे थे। उन्होंने नाईसे पूरी माँगो। उस समय नाई वहाँ न था। एक दूसरा ब्राह्मण, जो वहाँ था, बोला 'मैं देता हूँ।' इसपर भोजनकर्त्ताने कहा 'नहीं तुम न दो; वही आकर दे देगा।' उक्त ब्राह्मणने कहा, 'यदि मेरा जनेऊ इसमें बाधक है, तो मैं इसे तोड़े डालता हूँ।' यदि सच-मुच ऐसा कहीं कभी हुआ हो, तो भोजन-कर्ताकी मूर्खता वा अज्ञान ही इसका कारण हो सकता है।

कान्यकुब्जोंका ऊँच-नीच विभाग भी सह-भोजन बन्द करने और इस प्रकारके उदाहरणोंकी सृष्टिका कारण है। कान्यकुब्जों में १६ गोत्रोंके ब्राह्मण प्रसिद्ध हैं, जिनमें उपमन्यु, कश्यप, कात्यायन, भारद्वाज, शाण्डिल्य और सांकृत्य इन षट्-कुलोंके उत्तम तथा वसिष्ठ, पराशर, कौण्डित्य, कारिषि, कौशिक, भारद्वाज, धनञ्जय, गौतम, वत्स, और गर्ग गोत्रोंके मध्यम माने जाते हैं। काश्यप गात्र आधा समझा जाता है और इसकी गिनती षट्कुलमें ही होनेके कारण छ घर साढ़े छ हो गये हैं।

जो तीन कान्यकुब्ज वंशावलियाँ हमारे पास हैं, उन सभोनें गोत्रप्रवरका वर्णन बड़ी ही उपेक्षाके साथ किया है। ऊपर जो छ गोत्र बताये गये हैं, उनमें प्रवर तो कदाचित् किसीके ही ठीक हों और दस गोत्रोंमें तो कुछके नाम भी ठीक नहीं हैं। बात यह है कि यह काम जितना ही कठिन और शोध-साध्य है, उतना ही सहज उक्त वंशावलियोंके लेखकोंने समझ रखा था और अपनी शक्ति और योग्यताका विचार नहीं किया था। अब हम उनके लेखोंके खण्डनमें प्रवृत्त न होकर षट्-कुलोंके गोत्र प्रवर नीचे देते हैं:—

गोत्र	प्रवर ऋषि	आर्षेय प्रवर
१ उपमन्यु	वसिष्ठ, इन्द्रप्रमति और अभरद्वसु	वासिष्ठ, ऐन्द्रप्रमद, आभरद्वसव्य
२ कश्यप	कश्यप, असित और देवल	काश्यप, आसित, दैवल
३ कात्यायन	विश्वामित्र, कत और अक्षील	वैश्वामित्र, कात्य, आक्षील
४ भारद्वाज	अङ्गिरा, वृहस्पति और भरद्वाज	आङ्गिरस, वार्हस्पत्य, भारद्वाज
५ शाण्डिल्य	कश्यप, असित और देवल	काश्यप, आसित, दैवल*
६ साङ्कृत्य	अङ्गिरा, गुरु और संकृति	आंगिरस, गौरव साङ्कृत्य

इनमें कात्यायन और साङ्कृत्यके जो प्रवर अन्य वंशावलियोंमें बताये गये हैं, वे अशुद्ध हैं। विश्वामित्रके पुत्र कत और अक्षील वा अत्कील थे और ये ही कात्यायन गोत्रके प्रवर ऋषि हैं। कात्यायन-गोत्री अपने प्रवरऋषियोंके नाम भूलसे विश्वामित्र, किलक और कात्यायन कहते हैं, जो अशुद्ध है। महाभारतमें विश्वामित्रके दूसरे पुत्रका नाम अक्षीण और अन्यत्र कहीं अत्कील और उत्कील भी मिलता है। साङ्कृत्यके

* कोई-कोई शाण्डिल्य, आसित, दैवल भी कहते हैं। इस विषय का अनुसन्धान आवश्यक है।

पिता संकृति अत्रिसे दसवीं पीढ़ीमें थे, पर ये अङ्गिराके वंशमें चले गये थे, इसलिये इनके प्रवरऋषि हुए अङ्गिरा, गुरु (बृहस्पति) और सङ्कृति, पर वंशावलियोंमें सांकृत, किल और सांख्यायन लिखे हैं । उक्त दोनों गोत्रोंके लोगोंको इस विषयके अनुसन्धानके लिये 'गोत्रप्रवर निबन्ध कदम्बम्' देखना चाहिये ।

अब दस गोत्रोंको देखिये । ये इस प्रकार लिखे हैं:—

गोत्र	प्रवर ऋषि	प्रवर
१ वसिष्ठ	वसिष्ठ	वसिष्ट
२ पराशर	वसिष्ठ, शक्ति, पराशर	वाशिष्ठ, शाक्त्य, पाराशर्य
३ कौण्डिन्य	वसिष्ठ, मित्रावरुण और कुण्डिन	वासिष्ठ, मैत्रावरुण, कौण्डिन्य
४ कारिषि	विश्वामित्र, देवरात और उदल	वैश्वामित्र, दैवरात, औदल
५ कौशिक	विश्वामित्र, अघमर्षण और कुशिक	वैश्वामित्र, आघमर्षण, कौशिक
६ भरद्वाज	अंगिरा, बृहस्पति और भरद्वाज	आङ्गिरस, वार्हस्पत्य, भारद्वाज
७ धनञ्जय	विश्वामित्र, मधुच्छन्दा और धनञ्जय	वैश्वामित्र, माधुच्छन्दस्, धानञ्जय
८ गौतम	अङ्गिरा, अयास्य और गोतम	आङ्गिरस्, आयास्य, गौतम

९ वत्स	भृगु, च्यवन, आप्नुवान्, और्व और जमदग्नि	भार्गव, च्यावन, आप्नुवान्, और्व, जामदग्न्य
१० गर्ग	अङ्गिरा, गर्ग और शिनि	आङ्गिरस्, गार्ग्य, शैन्य

अन्य वंशावलियोंमें लिखे कविस्त वा कबिस्थ गोत्रका कहीं पता नहीं मिला। इस गोत्रके प्रवर वंशावलियोंमें कविस्त, देवराज, विश्वामित्र लिखे हैं, इससे यह विश्वामित्रवंशी प्रतीत होता है। यदि यह विश्वामित्रवंशी है, तो कविस्त वा कबिस्थ नहीं, यह गोत्र कारिषि हो सकता है जो अन्यत्र करीषा लिखा गया है। इसके विषयमें मत्स्य पुराणमें बताया गया है कि महर्षि कारिषि अत्रिवंशीय गोत्रप्रवर्त्तक ऋषि थे ओर विश्वामित्र, देवरात और उदल इनके प्रवर ऋषि हैं। इस प्रकार कारिषि गोत्रके वैश्वामित्र दैवरातौदल प्रवर हैं। अजीगर्त्तके जिस पुत्र शुनःशेफको विश्वामित्रने अपना पुत्र बना लिया था, उसीका नाम देवरात रखा था। यह देवरात वही है। हम जहाँतक इस विषयको देख समझ सके, उसका परिणाम पाठकोंके सामने हैं। उन्हें स्वयं अग्रसर होकर इन बातोंका अनुसन्धान कर आत्मसन्तोष करना चाहिये।

ऊँचे और नीचे कुलोंका गोत्रानुसार जो भेद कान्यकुब्जों में प्रचलित है, उसके सिवा षट्कुलोंमें उत्तम, मध्यम और निकृष्ट भेद भी माने जाते हैं। इन भेदोंकी पहचान वंशावलियोंमें लिखे 'विस्वा' से होती है। जो २० विस्वा है, वही उत्तम है। परन्तु विस्वोंकी यह कल्पना भी ३०० वर्षकी पुरानी

है, इसलिये आज एकके '२० विस्वा' के सामने दूसरेके २० विस्वा मूल्यमें न्यूनाधिक हो गये हैं। किसी समय तो विद्या और तपस्या उच्चताके द्योतक गुण थे; बादको उच्चोंकी दरिद्रता धनको भी अपने बराबर बैठानेको बाध्य हुई। इस प्रकार विद्या, तपस्या और धन उच्चताके चिह्न हुए। फिर तो विद्या और तपस्याकी मर्यादा घटी और धनकी बढ़ी। इस प्रकार 'विवाह कार्य' जिनके ऊँचे घरोंमें हुए, वे ऊँचे बन गये और जो निर्धन रहे, वे जहाँके तहाँ पड़े रहे। यही एक बड़ा भारी कारण है जिससे सहभोज बन्द हुआ, क्योंकि सहभोज बराबरो-का चिह्न है और जब दूसरा बराबर ही है, तब वह बेटी देनेके लिये बहुतसा धन बेटेवालेको क्यों देने लगा? इस प्रकार सहभोज बन्द हो जानेसे ऊँच नीच या कुलीन अकुलीनका भेद ही नहीं उत्पन्न हुआ, सबसे बड़े रोग अनर्थके मूल यौतुक या दायज (देहज) अथवा वर्त्तमान भाषामें ठहरौनीका जन्म हुआ।

इस बड़प्पनके अभिमानने उच्चकुलोंको बड़ी हानि पहुँचायी, क्योंकि इन्होंने तप और विद्यासे सम्बन्ध घटा या तोड़ लिया तथा धनार्जनका भी यत्न न किया और केवल लड़केके ब्याहके लिये अपनेसे हीन कुलके लोगोंके आनेकी राह देखना आरम्भ किया। कालान्तरमें उच्चकुलोंके लड़के मूर्ख होने लगे, फिर भी अपनी झूठी कुलीनताके अभिमानमें धनागमकी आशा वे न छोड़ सके। धीरे धीरे पहले नीच कुलवाले ऊँचे उठने और तथोक्त ऊँचे नीचे गिरने लगे। फल यह हुआ कि ये जहाँ लड़के ब्याहना अनुचित समझते थे, वहाँ

लड़कियाँ ब्याहनेको बाध्य होने लगे । जिनके लड़के पढ़े लिखे भी हैं, उनकी कठिनाई लड़कियोंके कारण बढ़ी है; क्योंकि लड़की तो योग्य वरको ही देनी चाहिये और समान सम्बन्धमें योग्य वरोंकी कमी होनेसे तथोक्त असमान कुलोंमें देनेको बाध्य होते हैं। यदि भेदभाव दूर कर दिये जायँ, तो कान्यकुब्ज ब्राह्मण भी एक समाज या बिरादरी बन जायँ और उनकी बहुत सी समस्याएँ हल हो जायँ। इसका एक ही उपाय है कि खान-पानका भेदभाव उठा दिया जाय। इसके बाद या साथ ही बेटी व्यवहार प्रचलित हो जायगा। सगोत्रियोंसे आरम्भ करने से सहभोजका काम सहज हो सकता है।

अन्तमें कान्वकुब्ज ब्राह्मणोंमें प्रचलित पदवियोंका कुछ वर्णन करके हम यह प्रस्तावना समाप्त करते हैं। कान्यकुब्ज ब्राह्मणोंकी ये पदवियाँ वा अल्लें प्रसिद्ध हैं:—अग्निहोत्री, अध्वर्यु, उपाध्याय, अवस्थी, चतुर्वेदी (चौबे), त्रिपाठी (तिवारी) त्रिवेदी, पाठक, पांडे, द्विवेदी (दुबे), दीक्षित, मिश्र, वाजपेयी और शुक्ल। अग्निहोत्र करनेवाले अग्निहोत्री, यजुर्वेदके पण्डित और यज्ञ करानेवाले अध्वर्यु, वेदोंके पढ़ानेवाले उपाध्याय, आवसथ्य यज्ञ करनेवाले अवस्थी, चारो वेद पढ़नेवाले चतुर्वेदी, लौकिक, वैदिक तथा आध्यात्मिक विद्याएँ पढ़नेवाले त्रिपाठी, तीन वेद पढ़नेवाले त्रिवेदी, वेद पढ़नेवाले पाठक, पण्डित पांडे, दो वेद पढ़नेवाले द्विवेदी, यज्ञकी दीक्षा लेनेवाले दीक्षित, त्रयी और अथर्ववेदको अथवा वैदिक और तान्त्रिक प्रक्रियाओंका सम्मिश्रण करनेवाले मिश्र, वाजपेय यज्ञ करनेवाले वाजपेयी और शुक्ल यजुर्वेद पढ़नेवाले शुक्ल कहाते हैं।

मानुषी सृष्टिका क्रम

सनातन हिन्दू मतानुसार श्रीमन्नारायणकी नाभिसे कमल और कमलसे ब्रह्मा उत्पन्न हुए और इन्होंने संसारकी सृष्टि की। आरम्भमें मैथुनी सृष्टिका होना सर्वथा असम्भव था, इसलिये सप्तर्षियोंका ब्रह्माके मानसपुत्र माना जाना युक्तिसंगत है। हमारे प्राचीन इतिहासका बहुतसा पता मत्स्य, वायु और विष्णु इन तीन पुराणोंसे लग जाता है। इनमें भी मत्स्य और वायु पुराण विष्णु पुराणसे प्राचीनतर हैं। इसलिये मत्स्यपुराणके अनुसार सृष्टिका वर्णन किया जाता है।

मत्स्य पुराणमें बताया गया है कि ब्रह्माने अपने वीर्यका जो यथेच्छा हवन किया, उससे हुताशन नामक अग्निका जन्म हुआ। इससे भृगु, वसिष्ठ, अंगिरा, अत्रि, मरीचि, पुलस्त्य और पुलह नामके सप्तर्षि उत्पन्न हुए। पुलस्त्यसे राक्षस और पुलहसे पिशाच जन्मे; शेष पाँच ऋषियोंसे मानुषी सृष्टि हुई। ये सब ऋषि ब्रह्मापुत्र कहलाते हैं। इक्ष्वाकुकुलके पुरोहित वसिष्ठ तो बताये जाते ही हैं, पर साथ ही यह भी कहा जाता है कि इक्ष्वाकुसे श्रीरामचन्द्रके समयतक वे ही इस वंशके पुरोहित थे। श्रीरामके समयमें भी वसिष्ठ पुरोहित थे और विश्वामित्रके साथ इनका बड़ा झगड़ा भी चला था। उसके फल स्वरूप विश्वामित्रने उनके सौ पुत्रोंको मार डाला, तब शोकसन्तप्त

वसिष्ठजी अपने हाथ-पैर बाँधकर पासकी नदीमें जो बरसाती पानीसे लबालब थी, डूबकर आत्मघात करने लगे। परन्तु उस नदीने उनके बन्धन खोलकर उन्हें सूखी जमीनपर लाकर रख दिया। तबसे उस उरुञ्जिरा नदीका नाम विपाशा पड़ा, क्योंकि वसिष्ठजीको पाशरहित किया था। यह विपाशा ही आजकल व्यासा या व्यास नदीके नामसे प्रसिद्ध है।

दो वसिष्ठ हमको पुराणोंमें ही नहीं, ऋग्वेदतकमें मिलते हैं। परन्तु हमारा अनुमान है कि वसिष्ठवंशमें अनेक पीढ़ियों तक लोगोंके नाम वसिष्ठ ही होते रहे हैं जिससे वसिष्ठ पुरोहित इक्ष्वाकुसे श्रीरामचन्द्रतक पाये जाते हैं। इस प्रकार वासिष्ठ को वसिष्ठ मान लेनेके कारण वर्त्तमान इतिहासकी दृष्टिसे गड़बड़ी उत्पन्न हो गयी है। मत्स्य पुराणमें यह भी लिखा है वसिष्ठने नारदकी बहन अरुन्धतीसे ब्याह किया था और उनसे शक्ति नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिससे पराशर हुए। परन्तु यदि वसिष्ठ और अरुन्धती वास्तवमें मनुष्य थे, तो यह बात अति प्राचीन कालकी नहीं हो सकती। पराशर द्वापर में हुए हैं और जिस सूर्यवंशी ईक्ष्वाकु राजाके पुत्र निमिसे झगड़ेके कारण वसिष्ठजीको जन्मान्तर ग्रहण करना पड़ा था, वे श्रीराम और जनकके पहले हुए थे। इसलिये वसिष्ठके दूसरे जन्मसे ही हमें इतिहासका कुछ सूत्र मिल सकता है।

इक्ष्वाकुके पुत्र राजा निमिके पुरोहित वसिष्ठजी थे। एक बार राजा निमिने वसिष्ठजीसे कहा कि हमें यज्ञ कराइये, पर इन्होंने उत्तर दिया कि इन्द्रको यज्ञ करा दें, तब तुमको यज्ञ करा देंगे। निमिने कहा कि सब सामग्री प्रस्तुत है और

धर्मकार्यमें विलम्ब करना नीति-विरुद्ध है, क्योंकि जीवनकी स्थिरता नहीं है। यदि आप न यज्ञ करा देंगे, तो हमें अगत्या दूसरेसे कराना पड़ेगा। यह सुनकर भी वसिष्ठजीके चले जानेपर निमिने गौतम ऋषिसे यज्ञ कराया। इसपर वसिष्ठने निमिको और निमिने वसिष्ठको शाप दिया कि तुम्हारा देहान्त हो। निमि तो ब्रह्माकी आज्ञासे मनुष्योंकी पलकोंपर रहने लगे जिससे पलक मारनेका अर्थ ही निमेष हो गया। परन्तु ब्रह्माकी आज्ञासे मित्रावरुणके वीर्यसे वसिष्ठने जन्मान्तर ग्रहण किया और दूसरे जन्ममें भी ये वसिष्ठ ही प्रसिद्ध हुए।

वसिष्ठके इस पुनर्जन्मकी गाथा ऋग्वेदके ७वें मण्डलके ३३वें सूक्तमें इस प्रकार आयी है:—

उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठोर्वश्या ब्रह्मन् मनसोऽधिजातः।
द्रप्सं स्कन्नं ब्रह्मणा दैव्येन विश्वेदेवाः पुष्करेत्वाददन्त ॥१०॥
सत्रेह जाता विपितानमोभिः कुम्भेरेता सिसिचतुः समानम्।
ततोहमान उदियाय मध्यात् ततोजातमृषिमाहुर्वसिष्ठम् ॥१३॥

वसिष्ठके इस दूसरे जन्मकी चर्चा विष्णु पुराण, वाल्मीकीय रामायण उत्तरकांड तथा श्रीमद्भागवत् आदिमें भी है। इस वर्णनका सारांश यह है कि मित्र और वरुण जब बदर्याश्रममें तप कर रहे थे, तब वसन्त ऋतुमें उर्वशी फूल चुनने वहाँ गयी। उसे देख दोनो मोहित हो गये और वीर्य स्खलित होता देख शापके डरसे उसे जल-पूर्ण अच्छे घड़ेमें रख दिया, जिससे वसिष्ठ और अगस्त्य उत्पन्न हुए। ऋग्वेदके सप्तम मण्डलके द्रष्टा ये ही मैत्रावरुणी वसिष्ठ और इनके पुत्र हैं। यद्यपि वसिष्ठ अयोनिज थे, तथापि उर्वशीसे मित्रावरुणका

साक्षात् होनेके कारण कवियोंने वसिष्ठको वेश्यापुत्र तक कह डाला है !

वसिष्ठ केवल ऋषि वा महर्षि ही नहीं, परमर्षि माने गये हैं और इसका कारण यह था कि वसिष्ठके समान शक्ति-सम्पन्न ऋषि कोई नहीं हुआ। वैदिक देवताओंमें इन्द्र सबसे बड़े माने गये हैं। उन्हें वसिष्ठको छोड़ किसीने नहीं देखा।

ऋषयो वा इन्द्रं नापश्यन् तं वसिष्ठः प्रत्यक्षमपश्यत् सोऽब्रवीत् ब्राह्मणं ते वक्ष्यामि यथा त्वत्पुरोहिताः प्रजा प्रजनिष्यन्तेऽथ नेतरेभ्य ऋषयो मा प्रोवाच इति। तस्मा एतान् स्तोमभागानब्रवीत् ततो वसिष्ठ-पुरोहिताः प्रजाः प्रजायंत तद्वासिष्ठं ब्रह्मा कार्यः॥ तैत्तिरीय संहिता ३।५।२।

अर्थात् अन्य ऋषियोंने इन्द्रको प्रत्यक्ष नहीं देखा; उसे वसिष्ठने ही प्रत्यक्ष किया। उसने (इन्द्रने) कहा, 'तुझे एक ब्राह्मण (स्तोत्र) बताता हूँ, जिससे तुझे पुरोहित बनानेवाले लोग होंगे; परन्तु दूसरे ऋषियोंको मेरी (मुझे देखनेकी) बात न बताना। इस प्रकार उसने (इन्द्रने वसिष्ठको) स्तोत्र भाग बताये और तबसे ऐसे मनुष्य उत्पन्न हुए जिन्होंने वसिष्ठको पुरोहित बनाया। इस लिये वासिष्ठको (वसिष्ठवंशीय ब्राह्मणको) ब्रह्मा बनावे।

ताण्ड्य ब्राह्मण १५।५ में लिखा है कि भरतोंके पुरोहित सदा वसिष्ठ होते थे।

वसिष्ठकी महिमाकी और भी बहुतसी बातें हैं, जिनसे दो चार नीचे दी जाती हैं:—

वैवस्वत मनुकी स्त्री श्रद्धाने यज्ञकी दीक्षा ले होताके

पास कन्याके लिये संकल्प कर आहुति छोड़ी, तो इला नामकी कन्या हुई। वसिष्ठने मनुकी प्रार्थनापर भगवानकी स्तुति की और इलाको सुद्युम्न पुत्रमें परिणत किया। सुद्युम्न सुमेरु को तलेटामें गिरिजाशंकर विहारबनमें गया, तो वहाँ प्रवेश करते ही स्त्री हो गया। निकटके एक वनमें चन्द्रका पुत्र तप कर रहा था। वह इलापर मोहित हुआ और दोनो पति पत्नीवत् रहने लगे। एक बार इलारूपी सुद्युम्नने वसिष्ठका ध्यान किया, तो दयावश आकर उन्होंने आराधना कर शिव को प्रसन्न किया। शिवजीने वर दिया कि वह एक मास स्त्री और एक मास पुरुष रहा करेगा।

कहते हैं कि पहले युगोंका क्रम था कृत, द्वापर, त्रेता और कलियुग, परन्तु वसिष्ठने सूर्यवंशका पौरोहित्य लेकर त्रेताके बाद द्वापर कर दिया।

विश्वामित्रको श्रुतियों और ब्रह्मातकने ब्रह्मर्षि कहा, पर वसिष्ठने नहीं कहा। इसपर विश्वामित्रने भी अपनेको तबतक ब्रह्मर्षि नहीं माना, जबतक वसिष्ठने उन्हें ब्रह्मर्षि नहीं कहा।

महाराज दिलीप और सुदक्षिणका ग्रन्थबन्धन खुलते ही इनको मृत्यु होगी ऐसा योग था। परन्तु वसिष्ठने सुनते ही मृत्यु-योग मिटा दिया।

किसी धर्मकार्यके सङ्कल्पके समय सङ्कल्प वा प्रतिज्ञाकर्ता अपने गोत्र और प्रवर उच्चारण करता है, पर दुर्भाग्य है कि बहुत कम लोग जानते हैं कि ये गोत्र और प्रवर क्या हैं! कान्यकुब्ज वंशावलियोंमें इस विषयपर कोई प्रकाश नहीं डाला गया और जिनमें कुछ लिखा भी गया, वह धुंधले प्रकाशको

घने अन्धकारसे ढकनेके समान हो गया। इसलिये इस विषयकी चर्चा करना आवश्यक हो गया है।

गोत्र और प्रवर

बौधायनने बताया है 'सप्तानां सप्तर्षीणामगस्त्यष्टमानां यदपत्यं तद् गोत्रमित्याचक्षते।' अर्थात् सप्तर्षियों और आठवें अगस्त्यके जो पुत्र हैं इनके वे गोत्र कहाते हैं। अभिप्राय यह कि सप्तर्षि और अगस्त्य गोत्रकार हैं। पर गोत्रके साथ प्रवरोंका भी उच्चारण किया जाता है, इसलिये प्रश्न है कि ये प्रवर क्या हैं। किसी गोत्रके प्रवर ऋषि वे पूर्वज हैं जिन्होंने ऋग्वेदके सूक्त रचे और उनसे अग्निकी स्तुति की। यजमान अग्निसे प्रार्थना करता है, 'हे अग्ने! ऋग्वेदके सूक्तोंसे जिन्होंने आपकी स्तुति की है, उनका मैं वंशज हूँ।' यों तो प्रवरका अर्थ है बहुत श्रेष्ठ, परन्तु आपस्तम्ब प्रवरखण्डके भाष्यकार कपर्दिस्वामीका कहना है, 'प्रज्ञातबन्धूनां यैरग्निर्व्रीयते ते प्रवराः' अर्थात् जाने हुए बन्धुओंमें जिन्होंने अग्निका वरण कर साक्षात्कार किया है, वे प्रवर हैं।

अब प्रश्न होता है कि ये प्रवर कौन होते हैं गोत्रकारके पूर्वज वा वंशज। इसका उत्तर है, दोनो। किसी गोत्रके पूर्वज प्रवर ऋषि होते हैं, जैसे उपमन्यु गोत्रके प्रवर हैं वसिष्ठ, इन्द्रप्रमद और अभरद्वसु। ऐसे ही शाण्डिल्य गोत्रके प्रवर हैं कश्यप, असित और देवल। कश्यपके पुत्र असित, इनके शण्डिल और इनके देवल। पर किसी गोत्रके गोत्रकार और इनके वंशज भी प्रवर ऋषि होते हैं। जैसे कश्यप गोत्रके प्रवर हैं कश्यप स्वयं और इनके पुत्र असित और असितके पौत्र देवल। किसी गोत्रका

मूल और उसके पितृ-पितामह आदि भी प्रवर होते हैं, जैसे पराशर गोत्रके प्रवर हैं वसिष्ठ, शक्ति और पराशर स्वयं। परन्तु ऐसे भी गोत्र हैं जिनके प्रवर पितृपितामह आदि ही नहीं हैं, और लोग भी हैं। जैसे वत्स गोत्रके पाँच प्रवर हैं भृगु, च्यवन, आप्नुवान्, और्व और जमदग्नि। मत्स्यपुराणके अनुसार जमदग्नि वत्सके पिता और और्व प्रपितामह हैं। और्वके पिताका नाम आप्नुवान् और प्रपितामहका भृगु है। च्यवन आप्नुवान्के बड़े भाई और वत्स गोत्रके प्रवर हैं।

ब्रह्माके पाँच मानस पुत्रोंमें वसिष्ठके इस प्रकार देहान्तर-प्राप्त करनेसे चार ही रह गये और इन्हीसे मानुषी सृष्टि हुई। प्रत्येक मन्वन्तरमें अलग अलग सप्तर्षि होते हैं, इसलिये आदि सृष्टिमें तो भृगु, अंगिरा, अत्रि, मरीचि, पुलह, पुलस्त्य और वसिष्ठ मानस पुत्र और सप्तर्षि थे और आठवें स्वायम्भुव मनु थे।* परन्तु सप्तम मन्वन्तरमें श्राद्धदेव मनुके समयमें तथा वैवस्वत मनुके समयमें भी वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, जमदग्नि, गौतम, विश्वामित्र और भरद्वाज सप्तर्षि थे। वैवस्वत मन्वन्तरके पहले स्वायम्भुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस और रैवत ये छ मन्वन्तर हो चुके हैं। आजकल वैवस्वत मन्वन्तर है, इसलिये इस समयके लिये वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, जमदग्नि, गौतम, विश्वामित्र और भरद्वाज ही सप्तर्षि हैं। परंतु ये सप्तर्षि उन मूल सप्तर्षियों वा पंचर्षियोंके वंशज हैं, जिनका स्वायम्भुव मन्वन्तरमें उदय हुआ था। मरीचिके पुत्र कश्यप और कश्यपके मित्रावरुण तथा

---

* महाभारत शां० अ० २९७ के अनुसार मूल चार ही गोत्र हैं अंगिरा, कश्यप, वशिष्ठ और भृगु।

मित्रावरुणके वसिष्ठ हुए। इस प्रकार वसिष्ठ ब्रह्माके मानसपुत्र मरीचिके प्रपौत्र हुए, परंतु इनके जन्मतक मैथुनी सृष्टिका आरम्भ नहीं हुआ था। अगस्त्य वसिष्ठके भाई हैं। भरद्वाज और गौतम अंगिराके पौत्र तथा जमदग्नि भृगुके प्रपौत्र और्वके पौत्र हैं। अत्रि अवश्य ही इन आधुनिक सप्तर्षियोंमें भी मिलते हैं, परन्तु ये उन मूल अत्रिके वंशज जान पड़ते हैं। विश्वामित्र अत्रिके प्रपौत्र पुरुरवाके प्रपौत्र गाधिके पुत्र हैं। इससे स्पष्ट है कि वर्त्तमान गोत्रकार ऋषि मूल सप्तर्षियोंकी सन्तान हैं।

लिंगपुराणके अनुसार वसिष्ठके पुत्र इन्द्रप्रमति, इन्द्रप्रमति के भद्र और भद्रसे वसु तथा वसुसे उपमन्यु उत्पन्न हुए थे। उसमें यह भो लिखा है कि वसिष्ठसे घृताची अप्सराके गर्भसे कपिंजलका जन्म हुआ था। इन्हो कपिंजलके दूसरे नाम त्रिमूर्त्ति और इन्द्रप्रमति थे। इन्हो इन्द्रप्रमतिने एक संहिताकी रचना कर अपने बेटे मांडुकेयको (विष्णुपुराणके अनुसार मार्कण्डेयको) पढ़ायी थो। मार्कण्डेयने अपने पुत्र सत्यश्रवाको, सत्यश्रवाने सत्यहितको और सत्यहितने अपने पुत्र सत्यश्रोको पढ़ायी थी। सत्यश्रीने शास्त्राभ्यास तत्पर महातेजा शाकल्प, रथीतर और वाष्कलि भरद्वाज नामक तीन शिष्योंको पढ़ायी थो। परंतु मत्स्यपुराणमें इन्द्रप्रमदादि गोत्रप्रवर्त्तक वसिष्ठवंशी ऋषि बताये गये हैं। ब्रह्माण्ड पुराणके अनुसार वसिष्ठ, शक्ति, पराशर, इन्द्रप्रमति, भरद्वसु, मैत्रावरुण कुण्डिन, सुद्युम्न, बृहस्पति और भरद्वाज ये मंत्रों और ब्राह्मणोंके संकलनकर्त्ता हैं। ये मंत्रादिके कर्त्ता और विधर्मके ध्वंसकारक हैं। इन्होंने समस्त ब्राह्मणों और वेदशाखाओंके लक्षण किये थे।

विष्णुपुराणके अनुसार कृष्ण द्वैपायनने अपने शिष्यों पैल, वैशम्पायन, जैमिनि और सुमन्तुकी सहायतासे चारो वेदोंका संकलन किया था। पैलके दो शिष्य थे, वाष्कल और इन्द्रप्रमति। इन्द्रप्रमतिको गुरुने जो ऋग्वेद संहिता दी थी, उसीका कुछ अंश उन्होंने अपने पुत्र माण्डुकेयको पढ़ाया था। ये इन्द्रप्रमति उपमन्यु गोत्रके प्रवरऋषि नहीं जान पड़ते, क्योंकि एक तो उपमन्युके पूर्वज इन्द्रप्रमतिको वासिष्ठ होना चाहिये और इस प्रसंगमें कहीं वसिष्ठका नामतक नहीं है और दूसरे यदि हम इन्हें वासिष्ठ मान भी लें, तो ये कृष्ण द्वैपायनके भी बहुत नीचे चले जाते हैं। वसिष्ठके पुत्र शक्ति, शक्तिके पराशर और पराशरके कृष्ण द्वैपायन हैं और इन्द्रप्रमति कृष्ण द्वैपायनके शिष्य पैलके शिष्य बताये जाते हैं। परन्तु गोत्रप्रवरनिबन्धकदम्बमके अनुसार वसिष्ठके तीन पुत्र थे मैत्रावरुण, इन्द्रप्रमति और शक्ति। इस हिसाबसे इन्द्रप्रमति कृष्ण द्वैपायनसे बहुत बड़े ही न थे, बल्कि उनके पिता पराशरके चाचा थे। अंगिराके चाचा अंगिरासे पढ़ते थे यह तो लिखा पाया जाता है, परन्तु कृष्ण द्वैपायनके पिताके चाचा इन्द्रप्रमति द्वैपायनके शिष्य पैलसे पढ़ते थे यह अनहोनीसी बात जान पड़ती है। फिर इन्द्रप्रमतिका नाम जिस क्रमसे लिखा है, उससे जाना जाता है कि वे शक्तिसे बड़े थे, इसलिये उनके पैलके शिष्य होनेकी कल्पना किसी प्रकारकी ही नहीं जा सकती। इससे सिद्ध हुआ कि वासिष्ठ इन्द्रप्रमति और पैलके शिष्य इन्द्रप्रमति अलग-अलग हैं। लिंगपुराणमें जिन इन्द्रप्रमतिका वर्णन है, वे ही वासिष्ठ इन्द्रप्रमति हैं और वे ही उपमन्यु गोत्रके प्रवरऋषि हैं। गोत्रप्रवर

निबंधकदम्बम्में इन्द्रप्रमतिके पुत्र अभरद्वसु लिखे हैं। इसलिये वसिष्ठके पुत्र इन्द्रप्रमति और इन्द्रप्रमतिके अभरद्वसु मानने चाहिये।

गोत्रकार उपमन्यु ऋषि

उपमन्यु ऋषिके पिताका नाम महाभारत अनुशासनपर्वके १४वें अध्यायके अनुसार व्याघ्रपाद था। उपमन्यु दो भाई थे और दूसरेका नाम धौम्य था। व्याघ्रपाद अपनी पत्नी और पुत्रों समेत हिमालय पर्वतपर उसी नदीके किनारे रहते थे, जहाँ बालखिल्य आदि मुनियोंका निवास था। एक बार जब खेलते खेलते उपमन्यु मुनियोंके आश्रममें गये, तब वहाँ गाय दुही जाती देखी और घर लौटकर मातासे कहा कि दूधभात (खीर) खिलाओ। इसपर माताने आटा घोलकर दोनों भाइयोंको दे दिया। परंतु उपमन्यु दूधका स्वाद जानते थे, क्योंकि पिताके साथ यज्ञकालमें किसी बड़े कुलमें गाय दुही जाती ही नहीं देखी थी, दूध भी पिया था। इससे मातासे बोले कि यह तो दूध नहीं है। इसपर माताने दुखी होकर कहा, 'बेटा, वनवासी गिरिकंदरानिवासी, कन्दमूलफलाशी मुनियोंके यहाँ दूध कहाँ? इस जंगलमें तो गायका नाम भी नहीं है। दूध कहाँसे आवे? हम लोगोंके सर्वस्व महादेवजी ही हैं, इसलिये हे पुत्र! उन्हीकी आराधनासे कामना पूरी होगी।

इसपर उपमन्यु शंकरकी आराधनामें तत्पर हुए। कहते हैं कि एक सहस्रवर्ष वे बायें पैरके अंगूठेके सहारे शिवजीकी आराधना करते रहे। प्रथम सौ वर्ष फलाहार करके रहे; द्वितीय सौ वर्ष

गिरे हुए पत्ते खाकर रहे; फिर सौ वर्ष वायु भक्षण करके और अंतिम सौ वर्ष फल खाकर रहे। इसपर भूतनाथ प्रसन्न हो इन्द्रका रूप धारणकर उपमन्युके पास आये और बोले कि वर माँगो। पर इन्होंने कहा कि महादेवके सिवा मैं किसीसे कुछ नहीं मांगता। महेश्वरके वचनसे मैं कृमि वा वृक्षतक होनेको तैयार हूँ; परन्तु दूसरेके कहनेसे मैं त्रिभुवनपति भी होना नहीं चाहता। अन्तमें शिवजीने उन्हें अपने रूपका दर्शन दिया और कहा कि वर माँगो। उपमन्युने बड़ी स्तुति कर कहा कि 'यदि आप मुझपर प्रसन्न होकर वर देते हैं, तो हे प्रभु, आपमें मेरी नित्य भक्ति हो; भूतभविष्य वर्त्तमानका मुझे ज्ञान हो; बान्धवों सहित मैं सदा दूध पिया करूँ; मेरे आश्रममें आपका सान्निध्य हो।' इसपर महेश्वरने प्रसन्न होकर कहा, "तुम दुःखरहित अजर-अमर होओ, यशस्वी, तेजयुक्त, दिव्यज्ञान समन्वित, शीलवान्, गुणसम्पन्न सर्वज्ञ होओ, तुम्हारा यौवन अक्षय तथा तेज अग्निके समान हो। इनके सिवा जो जो वर उन्होंने मांगे थे, सब देकर शिवजी वहीं अन्तर्धान हो गये। महादेवजीके प्रसादसे उपमन्यु यशस्वी और दिव्यज्ञान सम्पन्न हुए, इसीसे आज भी शिवजी उपमन्यु गोत्रके आराध्य इष्टदेव माने जाते हैं।

उपमन्युकी गुरुभक्ति

उपमन्युके गुरुका नाम आयोदधौम्य था, जिनके आश्रममें रहकर वे विद्याध्ययन करते थे। गुरुकुलके नियमानुसार प्रत्येक विद्यार्थी गुरुशुश्रूषा करता था। इसमें गुरुजीकी घर गृहस्थीकी सभी सेवाटहल भी रहती थी। विद्यार्थीका काम भिक्षा मांग-कर लाना और गुरुजीके सामने रख देना और उनकी आज्ञासे

उसे वा उसके किसी भागको ग्रहण करना था। उपमन्यु भिक्षा माँगकर जो लाते थे, वह खाते थे और गुरुजीकी गायें चराया करते थे। एक दिन इन्हें हृष्ट-पुष्ट देख गुरुजीने पूछा कि तुम क्या खाते हो। इन्होंने उत्तर दिया कि जो माँगकर लाता हूँ, वही खाता हूँ। गुरुने कहा कि 'मुझे अर्पण किये बिना तुम्हारा उसे खाना उचित नहीं है।' दूसरे दिन जो ये माँगकर लाये, वह गुरुजीके सामने रख दिया। गुरुजीने सारी भिक्षा अपने यहाँ रख ली, पर उपमन्युने उनसे यह नहीं कहा कि मैं क्या खाऊँगा। कुछ दिनोंतक यही क्रम चला। एक दिन गुरुजीने देखा कि यह खानेको कुछ नहीं पाता, फिर भी दुबला नहीं होता। इसलिये पूछा कि 'अब क्या खाते हो?' इन्होंने उत्तर दिया कि गायोंका दूध पीता हूँ। इसपर गुरुजीने कहा कि 'वह तो मेरा अंश है; उसे तुम नहीं ले सकते।' 'जो आज्ञा' कहकर उपमन्युने उस दिनसे दूध पीना भी छोड़ दिया, पर दुबले नहीं हुए। इसपर गुरुजीने पूछा कि अब क्या खाते हो? उपमन्युने बताया कि 'बछड़ोंके मुँहसे जो दूध गिरता है, वही खाता हूँ।" यह सुन गुरुजी बोले कि 'वह तो बछड़ोंका भाग है। वह खाना तुम्हारे लिये उचित नहीं।'

इस दिनसे उपमन्युका खाना-पीना बन्द हो गया। एक दिन जब वे भूखसे व्याकुल हुए, तब अकौड़ेके पत्ते खा लिये। इससे अन्धे हो गये और जब रास्ता नहीं सूझा तो गायें चराते चराते जंगलके एक कुएँमें जा गिरे। जब रातको गुरुजीके आश्रममें नहीं पहुँचे, तब ये उन्हें खोजने निकले। जंगलमें चिल्लाने लगे 'बेटा, उपमन्यु! कहाँ हो?' गुरुजीका बोल जब इन्हें सुनाई

दिया, तो कुएँसे बोले कि 'गुरुजी, कुएँमें पड़ा हूँ।' जब पूछा कि 'कैसे गिरे', तो सारा वृत्तान्त बताया। गुरुजीने कहा कि देवताओंके वैद्य अश्विनीकुमारोंकी स्तुति करो। जब उपमन्युने प्रार्थना की, तब उनके नेत्र खुल गये और आँखोंमें ज्योति आ गयी। उपमन्यु ऋषिको अश्विनीकुमारोंने जो ओषधि दी, वह भी उन्होंने गुरुजीको अर्पण किये बिना नहीं खायी। आयोदधौम्य गुरुजी शिष्य उपमन्युकी गुरुभक्तिसे बड़े प्रसन्न हुए और बोले कि सब वेद और विद्याएँ तुम्हें भासित होंगी। शंकरके प्रसाद और गुरुके आशीर्वादसे उपमन्यु बड़े विद्वान्, तेजस्वी और सम्पन्न तथा गोत्रकर्त्ता ऋषि हुए।

उपमन्यु भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रके समसामयिक थे, क्योंकि इन्होंने शिवजीकी महिमा इन्हीके मुँहसे कहलवायी थी। इससे सिद्ध होता है कि द्वापरके अन्तमें कुरुक्षेत्र युद्धके समय उपमन्यु थे और श्रीकृष्णचन्द्रके यहाँ भी उनका आदर होता था।

औपमन्यव

गोत्रकार उपमन्यु ऋषिके पुत्रका नाम प्राचीनशाल था, परन्तु उपमन्युके पुत्र होनेके कारण वे औपमन्यव कहाते थे और इसी नामसे प्रसिद्ध भी थे। इनकी चर्चा छान्दोग्योपनिषद्के पाँचवें अध्यायमें हुई है। वहाँ कहा गया है कि वे सत्ययज्ञ पौलुषि, इन्द्रद्युम्न भालवेय, जनक शार्कराक्ष और बुडिल आश्वतराश्वि पाँचो महाश्रोत्रिय महागृहस्थ ब्राह्मण अश्वपति कैकेयके पास ब्रह्मविद्या सीखने गये थे। शतपथ ब्राह्मणका समय ईस्वी सन्से २५०० वर्ष पूर्व माना जाता है और यही समय

छान्दोग्योपनिषद्का मान लिया जाय, तो यह घटना ४४४५ वर्ष पहलेकी ठहरती है। परन्तु यास्कके निरुक्तमें भी औपमन्यवका उल्लेख है, इसलिये ऐतिहासिक रीतिसे भी हम इनका समय निश्चित कर सकते हैं। निरुक्त २।११ में लिखा है, 'ऋषिर्दर्शनात्। स्तोमान् ददर्शेति औपमन्यवः।' अर्थात् देखनेके कारण ऋषि कहाता है। स्तोत्रोंको देखा यह औपमन्यवका मत है। फिर 'पञ्चजना मम होत्रं जुषध्वम्। गन्धर्वाः पितरो देवा असुरा रक्षांसित्येके। चत्वारो वर्णा निषादः पञ्चम इत्यौपमन्यवः।' (निरुक्त ३।८) पञ्चजना पदका अर्थ कुछ आचार्योंने किया है गन्धर्व, पितर, देव, असुर और राक्षस, परन्तु औपमन्यवका मत है कि चारो वर्ण और पाँचवाँ निषाद ये ही पञ्चजना हैं। यास्कने जब अपने ग्रन्थमें औपमन्यवका उल्लेख किया है, तब निश्चित है कि ये यास्कसे पहले हुए हैं।

प्रो० मैक्समुलरके मतसे यास्क ईसासे पहले चौथे शतकमें हुए हैं। इस प्रकार मोटे हिसाबसे यास्कका समय २३५० वर्ष पहले माना जाना चाहिये। मैक्समुलरके मतसे वाजसनेयी संहिताका समय हो ब्राह्मण ग्रन्थोंके निर्माणका समय था और ब्राह्मण ग्रन्थ ईस्वी सन्से ६०० से ८०० वर्ष पहले बने थे। इस प्रकार वाजसनेयी संहिता वा शुक्ल यजुर्वेदके सङ्कलनका समय २५०० से २७०० वर्ष पहले ठहरता है। परन्तु औपमन्यव वाजसनेयी संहिताके नहीं, तैत्तिरीय संहिताके अनुयायी थे। यही नहीं, वे तैत्तिरीय संहिताके आचार्य भी माने जाते थे। इसलिये वाजसनेयी संहिताके प्रादुर्भावके पहले औपमन्यवका होना असन्दिग्ध है। इस प्रकार यूरोपियनोंके मता-

नुसार भी औपमन्यवका समय २७०० वर्ष पहले मानना अनिवार्य है।

परन्तु स्वर्गीय आचार्य सत्यव्रत सामाश्रमीके मतानुसार यास्कमुनि कलिकी बारहवीं शताब्दीमें और ईसाके जन्मसे भी १९०० वर्ष पहले हुए हैं। इसके अनुसार आज यास्कको ३८४५ वर्ष हुए हैं और यास्कसे पहले होनेके कारण औपमन्यवका समय प्रायः ४००० वर्ष पूर्व सिद्ध होता है। लोकमान्य बाल गङ्गाधर तिलकने अपने 'ओरायन' नामक अंगरेजी ग्रन्थमें ब्राह्मण ग्रन्थोंका निर्माणकाल ४५०० वर्ष पूर्व माना है और यही मत वेदान्तभूषण हीरेन्द्रनाथ दत्तने अपने 'उपनिषत्' (ब्रह्मतत्व) ग्रन्थमें स्वीकार किया है।

उपमन्यु कुरुक्षेत्र युद्धके समय थे, इसलिये औपमन्यवको कुरुक्षेत्र युद्ध अथवा उसके अव्यवहित उपरान्त मानना अनिवार्य है। इस समय तक उपमन्युसे २०६ पीढ़ियाँ हुई हैं और २५ वर्षकी एक पीढ़ी माननेसे ५०३० वर्ष होते हैं और इतना ही समय कलियुगका बीता है। उपमन्युसे भूपति दीक्षिततक ४० पीढ़ियाँ हुई हैं और २५ वर्षकी पीढ़ीके हिसाबसे इनका समय ईस्वी सन् १००० के लगभग पड़ता है। परिमालके गद्दीपर बैठनेका समय ११६५ ईस्वी है और भूपति दीक्षित उसके समसामयिक थे। अवश्य ही ये दीर्घजीवी और परिमालके समयमें वृद्ध होंगे।
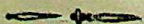
वेद और उसके भेद

वेद ज्ञानका नाम है और इसीलिये आर्यज्ञानके भाण्डारका नाम भी वेद है। वेदको त्रयी वा वेदत्रयी भी कहते हैं, जिससे ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेदका बोध होता है। ऋग्वेदकी उत्पत्ति अग्निसे, यजुर्वेदकी वायुसे और सामवेदको सूर्यसे मानी जाती है। ऋग्वेदका सम्बन्ध होतासे, यजुर्वेदका अध्वर्युसे और सामवेदका उद्गातासे है। अथर्ववेदको भी वेद कहते हैं, परंतु इसमें यज्ञमंत्र नहीं हैं तथा किसीको सन्तुष्ट करने तथा शाप और आशीर्वाद देनेके उपायोंका वर्णन है। फिर भी इसमें बहुतसे अति प्राचीन सूक्त हैं। अथर्ववेदको ब्रह्मवेद भी कहते हैं, क्योंकि अथर्वन्का अर्थ ब्रह्म है। त्रयीके तीनो वेद क्रमशः होतृ-वेद, अध्वर्युवेद और उद्गातृवेद भी कहाते हैं। प्राचीनत्व और प्रामाण्यकी दृष्टिसे अथर्ववेद त्रयीकी बराबरी नहीं कर सकता।

पहले वेद एक ही था, पीछे सुभीतेके लिये उसके तीन विभाग किये गये। ऋग्वेदको ही वास्तवमें वेद समझना चाहिये, क्योंकि यजुर्वेद तो यज्ञीय विधान सम्बन्धी यजुषों वा गद्य मंत्रोंका संग्रह है और सामवेद गायी हुई ऋचाओं अथवा ऋक् मंत्रोंका संग्रह है। इस प्रकार यजुर्वेद और सामवेद ऋग्वेदके पूरक वा अंश मात्र हैं। कदाचित् इसीलिये कौषीतकी ब्राह्मणमें यजुर्वेद और सामवेदको 'तत्परिचरणौ' अर्थात् ऋग्वेदके पीछे चलनेवाले कहा है।

अग्निपुराण, वायुपुराण और विष्णुपुराणके अनुसार आदिमें चतुष्पाद और शतसहस्र (एक लाख) शाखा समन्वित एक मात्र

यजुर्वेद था। वेदव्यासने इसीके चार भाग किये। मत्स्य और स्कन्द पुराणोंके अनुसार वेदव्यासने विष्णुके आठवें अवतार रूपसे जन्म लिया था, परन्तु भागवतके अनुसार वेदव्यास विष्णुके सत्रहवें अवतार थे। विष्णुपुराणसे जाना जाता है कि कृष्ण द्वैपायनके पहले और भी अनेक वेदव्यास हो चुके हैं। प्रति द्वापरयुगमें जगत्के कल्याणके लिये विष्णु व्यासरूपसे अवतार लेकर वेदविभाग करते रहते हैं। विष्णु जिस मूर्त्तिसे वेद विभाग करते हैं, वही मूर्त्ति वेदव्यास होती है। विभिन्न मन्वन्तरोंमें विभिन्न वेदविभाजक वेदव्यास जन्म लेते हैं। वैवस्वत मन्वन्तरके अट्ठाईसवें द्वापरके प्रतिद्वापरमें एक एक वेदव्यास जन्म ग्रहण किया करते हैं। पहले द्वापरमें स्वयम्भूने स्वयं वेद विभाग किया था। इसके बाद यथाक्रम प्रजापतिमनु, उशना (शुक्र), वृहस्पति, सविता, मृत्यु, इन्द्र, वसिष्ठ, सारस्वत, त्रिधामा, त्रिवृषा, भरद्वाज, अन्तरीक्ष, वप्र, त्रय्यारुण, धनञ्जय, कृतञ्जय, ऋणज्य, भरद्वाज, गौतम, हर्यात्मा, वेण, तृणविन्दु, ऋक्ष, शक्ति, पराशर, जातुकर्ण और कृष्ण द्वैपायन हुए। यही मत ब्रह्माण्ड, वायु, लिंग आदि पुराणोंका भी है। केवल इतना अन्तर है कि इनके अनुसार कुछ नाम बदल गये हैं।

यों तो एक वेदके चार वेद होना ही उस मूलकी चार शाखाएँ समझना चाहिये, परन्तु इनके सिवा भी एक एक वेदकी अनेक शाखाएँ प्रसिद्ध हैं। इसलिये प्रश्न होता है कि ये शाखाएँ क्या हैं? कहा जाता है कि "अध्ययन भेदाच्छाखाभेदोऽनादिः" अर्थात् वेदाध्ययनके भेदसे शाखाभेद अनादि है। इसका समर्थन मधुसूदन सरस्वतीके "प्रवचनभेदात् प्रति-

वेदं भिन्ना भूयश्च शाखाः" से होता है। अभिप्राय यह कि ज्यों ज्यों आर्योंकी बस्ती बढ़ती गयी और आचार्य केन्द्रसे दूर होते गये, त्यों त्यों स्थान विशेषके उच्चारण और पाठक्रम आदिमें अन्तर पड़ता गया, जिससे एक वेदकी अनेक शाखाएँ हो गयीं। जिस वेदकी लोकप्रियता अधिक हुई, उसीकी शाखाएँ पाठभेद आदिके कारण अधिक हुईं। इस हिसाबसे सामवेद विशेष लोकप्रिय प्रतीत होता है, क्योंकि इसके अनुयायी दूर दूर तक एक हजार शाखाओंमें विभक्त थे।

पण्डित सत्यव्रत सामाश्रीमका भी कहना है "पुरासीत् विद्या-पर्याय एवायं वेद शब्दः" अर्थात् प्राचीन समयमें यह वेद शब्द विद्या शब्दका ही पर्यायवाचक था। निरुक्तके भाष्यकार देव-राज यज्वाका, कहना है "वेदं तावदेकं सन्तमतिमहत्वाद्दुरध्यमनेक शाखाभेदेन समाम्नासि व्यासेन समाम्नातवन्तः। तद्यथा एक विंशतिधा बाह्वृच्यम् एकंशतधा आध्वर्य्यम् सहस्रधा सामवेदम् नवधा आथर्वणम्।" अर्थात् वेद एक ही था, परन्तु बहुत बड़ा और कठिनतासे अध्ययन योग्य था, इसलिये व्यासने उसके अनेक शाखाभेद किये। वे इस प्रकार कि ऋग्वेदकी २१, यजुर्वेदकी १०१, सामवेदकी १००० और अथर्ववेदकी ९ शाखाएँ कीं। प्रत्येक शाखामें एक सुन्दर उपनिषद् रखी। कुल ११८० उपनिषदें बतायी जाती हैं, जिनमें १०८ मिलती हैं।

ऋग्वेदकी दो शाखाएँ ही इस समय मिलती हैं शाकल और वाष्कल। महाभारतके अनुसार समस्त पंजाब जब एक

---

* देवराज यज्वाका जन्म सं० ११५७ अर्थात् ११०० ईस्वीमें दक्षिणमें रङ्गेशपुरीके समीप किसी ग्राममें हुआ था।

शासकके अधीन था, तब उसकी राजधानी शाकल थी। सम्भव है कि ऋग्वेदकी जो शाखा वहाँ पढ़ी जाती थी, वह शाकल कहाती हो अथवा शाकल्य ऋषिके आश्रममें जो संहिता पढ़ी जाती हो, उसका नाम शाकल्य हो। भागवतके १२ स्क० ६ के अनुसार शाकल्य माण्डुकेयके पुत्र थे और अपनी संहिता पाँच भागोंमें विभक्त कर उन्होंने वात्स्य, मुद्गल, शालीय, गोखल्य और शिशिर नामक पाँच शिष्योंको पढ़ायी थी। भागवत और विष्णुपुराणके अनुसार वेदव्यासके शिष्य पैलने ऋग्वेदको दो भागोंमें बाँटकर इन्द्रप्रमति और वाष्कल नामक शिष्योंको पढ़ाया था। वाष्कलने ऋग्वेदकी पहली शाखाको चार भागोंमें विभक्त करके अपने चार शिष्यों बौध्य, अग्निमाठर, याज्ञवल्क्य और पराशरको पढ़ाया था। उन्होंने और तीन संहिताएँ रचकर कालायनि, गार्ग्य और कथाजव नामक अपने शिष्योंको पढ़ायी थीं।

ऋग्वेदका विभाग दस मण्डलोंमें किया गया है। भिन्न-भिन्न ऋषियोंके देखे हुए या पाये हुए बहुत सूक्तोंका संग्रह 'मण्डल' कहाता है। ऋषिका सम्पूर्ण वाक्य सूक्त कहाता है। ऋग्वेदके मंत्र पद्यमें हैं और इससे प्रत्येक मंत्रकी संज्ञा ऋक् वा ऋचा है। ऋग्वेदका ब्राह्मण ग्रन्थ ऐतरेय है। ये उपनिषदें ऋग्वेदकी हैं:—ऐतरेय, कौषीतकी, नादविन्दु, निर्वाण, आत्मबोध, मुद्गल, यक्षमालिका, त्रिपुरा, सौभाग्य और वह्वृच्।

विषयोंकी दृष्टिसे वेदके चार भाग होते हैं, मंत्र वा संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषत्। संहिता केवल मंत्रोंका संग्रह है। परन्तु कौन मंत्र किस कर्मके लिये प्रयुक्त होता है अथवा किस मंत्रका कौन देवता, कौन ऋषि, कौन छन्द है तथा किस

कर्मके लिये उसका विनियोग वा उपयोग किया जाता है, यह बतानेवाला शास्त्र ब्राह्मण है। यज्ञकर्मके लिये किसी याज्ञिकके विवेचनका नाम ब्राह्मण है। शुक्ल यजुर्वेदका ब्राह्मण शतपथ है। शतपथका अर्थ है सौ अध्यायोंवाला। शतपथ ब्राह्मणमें यज्ञ-विषयके सिवा कुछ मंत्रोंकी व्याख्या और उपाख्यान भी हैं। पहले नौ अध्यायोंमें वेदभाष्य है और अन्तिम भागमें उपनिषत्। उपनिषत् तत्त्वज्ञान वा वेदान्तको कहते हैं। शतपथके अन्तिम भागमें जो उपनिषत् है, उसका नाम बृहदारण्यक है। इस उपनिषत्का प्रथम भाग आरण्यक है। आरण्यक उन ग्रन्थोंको करते हैं जो अरण्य वा जंगलमें पढ़े जाते हैं। इस प्रकार प्रत्येक ब्राह्मणमें ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषत् होते हैं। ब्रह्मचारी संहिता वा मंत्रोंका अध्ययन करता है। गृहस्थ मंत्रोंका प्रयोग वा विनियोग ब्राह्मणोंकी सहायतासे करता है। वानप्रस्थ अरण्यमें जा आरण्यक पढ़ता है और संन्यासी उपनिषत् वा तत्त्वज्ञानका मनन करता है।

यजुर्वेद

यजुर्वेदकी संहिता करनेमें व्यासजीको उनके शिष्य वैश-म्पायनने सहायता दी थी। वायुपुराणके अनुसार वैशम्पायन गोत्र नाम था। पाणिनिपर जो काशिका लिखी गयी है, उसमें बताया गया है, 'चरक इति वैशम्पायनस्याख्या तत्सम्बन्धेन सर्वे तदन्तेवासिनश्चरका इत्युच्यन्ते।' अर्थात् चरक वैशम्पायनका नाम है और इस सम्बन्धसे उनके सभी शिष्य चरक कहाते हैं। इससे जाना जाता है कि यजुर्वेदकी संहितासे सम्बन्ध रखनेवाले वैशम्पायनका पूरा नाम था चरक वैशम्पायन। वैश-

म्पायनने यजुर्वेदकी ८६ संहिताएँ करके अपने शिष्योंको दीं और इन्होंने नियमानुसार उन्हें ग्रहण किया। पर इनमें महातप याज्ञवल्क्य छूट गये। वैशम्पायनके ८६ शिष्य ८६ संहिताओंके आचार्य हुए। इनकी तीन भिन्न भिन्न श्रेणियाँ उदीच्य, मध्यदेशीय और प्राच्य हैं। श्यामायनि उदीच्योंके, आरुणि मध्य-देशियोंके और आलम्बि प्राच्योंके प्रधान हुए और ये संहितावादी द्विज चरक कहलाये।

आजकल हम लोग दो यजुर्वेदों कृष्ण और शुक्लके नाम सुनते हैं। इनकी भी एक कथा है। वायुपुराणके अनुसार किसी उद्देश्यसे सब ऋषि मेरुपर्वतपर एकत्र हुए और उन्होंने यह निश्चय किया कि 'हम लोगोंमें सप्तरात्रिके अन्दर जो यहाँ न आवेगा, वह ब्रह्महत्याका दोषी होगा यह हमारा सर्वसम्मत निश्चय घोषित किया जाता है।' इसपर सब ऋषि अपने शिष्यों सहित उस सभामें पहुँचे; केवल वैशम्पायन नहीं गये। इस प्रकार जब वैशम्पायन ब्रह्महत्याके दोषी हुए, तब उन्होंने अपने शिष्योंको एकत्र कर कहा, 'हे द्विजश्रेष्ठ! मेरे ऊपरसे ब्रह्महत्याका पाप दूर कीजिये। आप सब एकत्र हो हमें अपना निर्णय बता दें।' इसपर याज्ञवल्क्यने कहा, 'इन मुनियोंको रहने दीजिये; मैं अकेला ही अपने तपोबलसे इस पापको दूर कर दूँगा।' याज्ञवल्क्यकी इस प्रकारकी बात सुनकर वैशम्पायनको क्रोध आ गया और उन्होंने याज्ञवल्क्यका परित्याग करके कहा, 'जो तुमने मुझसे पढ़ा है, वह मुझे लौटा दो।' इसपर ब्रह्मवित्तम याज्ञवल्क्यने रुधिरयुक्त यजुर्मन्त्रोंको वमन कर उन्हें दे दिया।

वमन किये हुए जिन यजुर्मंत्रोंको वैशम्पायनके कुछ शिष्योंने

तित्तिर वा तीतरकी भाँति चुन लिया, वे तैत्तिरीय यजुर्वेद कह-लाये। वैशम्पायनके जिन शिष्योंने कर्णाटकमें (बृहदारण्यकके अनुसार मद्र देशमें) भ्रमण कर उनके पापका प्रायश्चित्त किया, वे चरक (भ्रमणकारी वा व्रताचारी) कहाये; भागवतके अनुसार चरकाध्वर्यु कहाये। अध्वर्युवेद यजुर्वेदका ही नाम है, क्योंकि उसमें यज्ञके विधि विधान हैं। इस समय इसका निश्चय करना असाध्य ही है कि इस घटनाका ऐतिहासिक रूप क्या था। वैशम्पायनकी पोथी याज्ञवल्क्यने फेंक दी और उसके बिखरे हुए पत्रोंको उनके अन्य शिष्योंने चुन लिया और इन चुने हुए मंत्रोंकी पोथीका नाम तैत्तिरीय संहिता पड़ा या इसके सिवा कोई और बात हुई यह कहना कठिन है। पाणिनिमें इसका सम्बन्ध तित्तिर ऋषिसे लगाया गया है, इससे सम्भव है कि वैशम्पायनके तित्तिर नामक किसी शिष्यने ही यह संग्रह किया हो। यह भी कहा जाता है कि तित्तिर वैशम्पायनके बड़े भाई थे और इनके शिष्य खण्डिक और ऊख थे। इनके पाँच शिष्य कालेट, सात्यायनि, हिरण्यकेशी, भारद्वाजी और आपस्तम्बी हुए। दक्षिणके तित्तिर देशमें इस संहिताका प्रचार होने और रहनेसे भी इसका नाम तैत्तिरीय पड़ सकता है। कर्णाटक और मद्रमें वैशम्पायनके शिष्योंने अपने भ्रमणमें इसका प्रचार किया ही होगा।

जो हो, इस पुरानी संहिताको कृष्ण यजुर्वेद भी कहते हैं, क्योंकि इसमें मंत्र और उनके विनियोग और विधान मिले हुए हैं। कुछ आध्यात्मिक बातें भी बढ़ायी गयी हैं। कृष्ण नामके विषयमें विद्यारण्य स्वामीने लिखा है 'व्याख्यातत्वेनाध्वर्यवं

क्वचिद्धोत्रं क्वचिदित्यत्रस्था बुद्धिमालिन्यहेतुत्वात्तद्यजुः कृष्ण-मीर्यते' अर्थात् होताओं और अध्वर्युओं दोनोके नियम होनेसे विद्यार्थी घबरा जाते हैं, इस लिये इसे कृष्ण कहते हैं। इसको ८६ संहिताओंमें मैत्रायणी, काठक और कपिष्ठल ही मिलती हैं। इसके ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् सभी तैत्तिरय कहाते हैं।

शुक्ल यजुर्वेद

वैशम्पायनको विद्या वमन करने बाद याज्ञवल्क्यने तपपूर्वक सूर्यकी आराधना की। इससे सूर्यदेव प्रसन्न हुए और जो यजुर्मंत्र सूर्यलोकको चले गये थे, (क्योंकि सूर्य ही वेदका भाण्डार है) उन्हें सूर्यदेवने घोड़ेका रूप धरकर याज्ञवल्क्यके बुद्धिमान् उत्तराधिकारीको दे दिया। जिन ब्राह्मणोंने ये यजुर्मंत्र पढ़े थे, वे वाजिन् कहलाये, क्योंकि वाजि (घोड़े) रूपी सूर्यने ये मंत्र दिये थे। वाज अन्नको कहते हैं और सनिका अर्थ प्राप्ति वा दान है। वाजसनि और वाजसनेयका अर्थ इस प्रकार किया जाता है "वाजस्य अन्नस्य सनिर्दानं यस्य स वाजसनिस्तदपत्यम् वाजसनेयः" अर्थात् अन्नका दान जिसका हो वह वाजसनि और वाजसनिका पुत्र वाजसनेय। कहते हैं कि वाजसनि याज्ञवल्क्यके पिताका नाम था। याज्ञवल्क्य भी गोत्र नाम था और उनका नाम था ब्रह्मराति। इस प्रकार याज्ञवल्क्यका पूरा नाम था ब्रह्मराति वाजसनेय याज्ञवल्क्य। वाजसनेयके उद्योग और परिश्रमसे यजुर्वेदकी नयी संहिता तैयार हुई, इसलिये यह वाजसनेयी संहिता कहलायी। इसे शुक्ल यजुर्वेद भी कहते हैं। इसका कारण यह है कि इसमें केवल यज्ञोंके मंत्र ही है विधिविधान वा

विनियोग आदि नहीं। "शुक्लानि यजूंषि" का अर्थ द्विवेद गङ्ग करते हैं "शुद्धानि यद्वाब्राह्मणेनामिश्रितमंत्रात्मकानि" अर्थात् ब्राह्मणोंसे न मिला हुआ मंत्रात्मक वेद।

तीन याज्ञवल्क्योंका पता लगता है। एक याज्ञवल्क्य तो युधिष्ठिरके राजसूयमें अध्वर्यु थे, जिसमें वसुपुत्र पैल होता, अंगिरावंशीय सुशामा धानञ्जय उद्गाता और व्यास पाराशर्य ब्रह्मा थे। (म० भा० सभा० अ० ३२) सत्यव्रतोके ब्याहमें एक याज्ञवल्क्य पुरोहित थे और व्यास पाराशर्यके यज्ञोपवीतके समय आचार्य थे। तीसरे याज्ञवल्क्य कल्कि विष्णुयशाके (दसवें अवतारके समय) गुप्तवंशके बाद हुए थे।

जिन याज्ञवल्क्यसे हमारा प्रयोजन है, उनके तीन गुरु थे। उद्दालक आरुणिसे उन्होंने मंत्र शास्त्र पढ़ा था, चरक वैशम्पायनसे यजुर्वेद और हिरण्यनाभ कौशल्यसे योग। कण्व याज्ञवल्क्यके शिष्य थे। वायु, ब्रह्माण्ड और मत्स्य पुराणोंके अनुसार याज्ञवल्क्य और अघमर्षण विश्वामित्रके वंशज हैं। अघमर्षण मधुच्छन्दाके पुत्र और विश्वामित्रके पौत्र हैं।

गुरु शिष्यके विरोधने बड़ा भयंकर रूप धारण किया। चरकोंके दक्षिण प्रायश्चित्तार्थ यात्रा करनेके लिये प्रस्थान करने पर याज्ञवल्क्यने अपना प्रभाव उत्तर भारतपर जमा लिया। उपमन्युके पुत्र औपमन्यव चरकाचार्य थे। पर उनके वंशके लोगोंने भी कृष्ण यजुर्वेदका पठन पाठन छोड़कर शुक्ल यजुर्वेदको अपना लिया। यही नहीं, दोनो पक्षोंका वैमनस्य बहुत बढ़ा और चरकोंके विरुद्ध यहाँतक लिखा गया कि चरकाचार्य नरकगामी होते हैं। इन सब कारणोंसे उत्तर भारतसे तैत्तिरीय

संहिताका बहिष्कार हो गया। मद्रास प्रदेशमें ही उसके अनुयायी पाये जाते हैं।

सांख्याचार्य कपिलके शिष्य आसुरि और आसुरिके प्रथम शिष्य पंचशिखा थे। आसुरिके दो गुरु और थे एक याज्ञवल्क्य और दूसरे कोई भारद्वाज। पंचशिखा धर्मध्वज जनकके गुरु थे और जनदेव जनकके समयमें भी मिथिला गये थे। महाभारतके ७० से १०० वर्षके लगभग ब्रह्मराति वाजसनेय याज्ञवल्क्य हुए हैं।

शुक्ल यजुर्वेदकी १५ शाखाएँ बतायी जाती हैं, परन्तु दो ही उपलब्ध हैं, एक माध्यन्दिन और दूसरी काण्य। मध्यन्दिन ऋषि वसिष्ठवंशी थे और शुक्ल यजुर्वेदकी जिस शाखाके आचार्य थे, वह माध्यन्दिन शाखा कहाती है। उपमन्यु गोत्रकी यही शाखा है। कण्व और मध्यन्दिन दोनो यज्ञवल्क्यके शिष्य थे।

वाजसनेयी संहिताकी माध्यन्दिन शाखामें ४० अध्याय हैं, जो ३०३ अनुवाकों और १९७५ कण्डिकाओंमें विभक्त हैं। पहले २५ अध्यायोंमें यज्ञादिके मंत्र हैं। प्रथम और द्वितीय अध्यायोंमें दर्श और पौर्णमासमें होनेवाले यज्ञों और इष्टियोंके, तृतीयमें प्रातः सायं अग्निहोत्र तथा ऋतुओंके आरम्भमें होनेवाले यज्ञोंके, चतुर्थसे अष्टमतक साधारणतः सोमयाग और नवम तथा दशममें उसके अन्य भेदों यथा वाजपेय, राजसूय आदिके मंत्र हैं। ९ वेंसे १८ वें अध्यायतक यज्ञवेदी, कुण्ड आदि बनानेके, १९ वेंसे २१ वेंतक सौत्रामणिके और २२ वेंसे २५ वें अध्यायतक अश्वमेधके मंत्र हैं। कहते हैं कि १८ वें अध्यायके बादके ७ अध्याय पीछे जोड़े गये हैं। कात्यायनकी

अनुक्रमणि और उसके परिशिष्टमें अन्तिम १५ अध्याय बहुत पीछे बने हुए बताये गये हैं। २६ वेंसे ३५ वें अध्यायतकको महीधरने भी 'खिल' वा पूरक (supplement) और ३६ वें से ४० वेंतकको शुक्रीय कहा है। मिताक्षराके अनुसार ३६ वें अध्यायके ३रे अनुवाकसे 'खिल' प्रारम्भ होता है और ३६।१ से आरण्यकका आरम्भ है। २६वेंसे २९ वें अध्यायतक उन यज्ञों और कर्मोंके मंत्र हैं, जिनका पिछले अध्यायोंमें वर्णन है। ३०वेंसे ३९ वें अध्यायतक नये यज्ञों यथा पुरुषमेध, सर्वमेध और पितृमेधके तथा प्रवार्य वा प्रायश्चित्तके मंत्र हैं। ४० वें अध्यायमें ईशावास्योपनिषद् है।

अन्य वेद

सामवेदकी तीन शाखाएँ कौथुमी, जैमिनी और राणायनीय प्रसिद्ध हैं। पहलीके अनुयायी उत्तर भारत और गुजरातमें, दूसरीके कर्णाटकमें और तीसरीके महाराष्ट्रमें हैं। सामवेदके दो ब्राह्मण हैं पञ्चविंश और षड्विंश। पञ्चविंश ही ताण्ड्य महाब्राह्मण कहाता है। षड्विंश ब्राह्मणमें ही दैवत ब्राह्मण भी है। इन्हीं ब्राह्मणोंके अन्तर्गत आरण्यक और अधिकतर उप-निषदें भी हैं।

अथर्ववेदका विभाग काण्डोंमें हुआ है। उसमें २० काण्ड हैं और ६००० मंत्र हैं। अथर्ववेदकी दो शाखाएँ उपलब्ध हैं शौनक और पैप्पलाद। पैप्पलादका प्रचार कश्मीरियोंमें हैं।

अथर्ववेद संहितामें परिशिष्टके चरणव्यूहके अनुसार १२३८० ऋचाएँ, २००० पर्याय और ७० कौशिकोक्तानि परिशिष्टाणि हैं।

कान्यकुब्ज ब्राह्मणोंमें दो ही वेदोंके अनुयायी हैं शुक्ल यजुर्वेद और सामवेदके। शुक्ल यजुर्वेदकी भी केवल माध्यन्दिन शाखाका ही उनमें प्रचार है और सामवेदकी कौथमी शाखाका ही प्रचलन है। माध्यन्दिन शाखावाले कात्यायन श्रौतसूत्र और पारस्कर गृह्यसूत्र तथा कौथुमी शाखावाले गोभिल श्रौतसूत्र और आश्वलायन गृह्यसूत्रके अनुसार चलते हैं। आचारमें यजुर्वेदियों और सामवेदियोंमें दक्षिण और बामका भेद हैं। यजुर्वेदी दक्षिणमार्गी हैं और सामवेदी वाममार्गी हैं। यजुर्वेदी पहले दाहना पैर धोते और सामवेदी बायाँ पैर धोते हैं। ऐसे ही यजुर्वेदियोंमें दक्षिण ओरसे और सामवेदियोंमें बायीं ओरसे शिखा बाँधनेकी चाल है। सन्ध्याके उपस्थानके दो एक मंत्र सामवेदी अधिक पढ़ते हैं तथा तर्पणके मंत्र भी इनके यजुर्वेदियोंसे भिन्न हैं।

वेदाङ्ग, सूत्र और उपवेद

वेदोंके सहायक वा अंग नामसे छ शास्त्र और हैं जो वेदांग वा षडङ्ग कहाते हैं। इनके विषयमें पाणिनीय शिक्षामें ये दो श्लोक हैं:—

छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ कथ्यते।
ज्योतिषामयनं चक्षु निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते ॥४१॥
शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्।
तस्मात्साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते ॥४२॥

अर्थात् छन्दःशास्त्र तो वेदके दोनो पैर हैं, कल्प दोनो हाथ है, ज्योतिष शास्त्र नेत्र है, निरुक्त कान है, शिक्षा नाक है और व्याकरण मुँह है। छन्दको पैर कहनेका अभिप्राय यह है कि

छन्द ही उसका आधार है। कल्पके बिना वैदिक कर्मानुष्ठानका क्रम नहीं जाना जा सकता, इसलिये इसे हाथ कहा है। ज्योतिषके बिना कालका ज्ञान नहीं होता, इसलिये इसे चक्षु कहा है। शिक्षाके बिना वैदिक मंत्रोंका ठीक ठीक उच्चारण नहीं हो सकता तथा सस्वरवेद पढ़नेमें नासिकाका भी यथेष्ठ उपयोग होनेसे इसे नासिका ठहराया है। व्याकरणके बिना शुद्ध वा अशुद्ध शब्दका ज्ञान नहीं होता, इसलिये इसे मुँह बताया है तथा निरुक्तके बिना शब्दार्थका पता नहीं लगता और शब्द जानना न जानना बराबर रहता है। इसलिये साङ्गवेद वेद पढ़कर ही मनुष्य ब्रह्मलोकमें प्रतिष्ठित होता है।

इनके सिवा भी वैदिक कर्मकाण्डसे सम्बन्ध रखनेवाले कुछ ग्रन्थ हैं, जो सुत्र कहाते हैं। सूत्र दो प्रकारके हैं श्रौतसूत्र और स्मार्त्तसूत्र। कल्प वा कल्पसूत्र ही श्रौतसूत्र कहाते हैं। स्मार्त्त-सूत्रोंमें गृह्य और साम्याचारिक सूत्रोंका समावेश होता है। साम्याचारिक सूत्रोंका दूसरा नाम धर्म्मसूत्र हैं। श्रौतसूत्रोंके अनुसार वैदिक यज्ञयागादि होते हैं। गृह्यसूत्रोंमें गर्भाधानसे अन्त्येष्टिपर्यन्तके कर्मों और उनकी विधिका वर्णन है। धर्म-सूत्रोंमें धर्मशास्त्र है, जिनके आधारपर पीछे स्मृतियोंकी रचना हुई है। शूल्वसूत्र भी श्रौतसूत्रोंके ही अंग हैं, क्योंकि इनमें वेदीरचना, यज्ञकुण्ड रचना, महत्वमापन आदिसे सम्बन्ध रखनेवाले विषय हैं।

चार वेदोंके ढंगपर चार उपवेद भी गिनाये जाते हैं। ये हैं, भागवतके अनुसार, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गन्धर्ववेद और स्थापत्यवेद। परन्तु शुक्रनीतिसारमें अथर्ववेदका उपवेद तंत्र

बताया गया है। शुक्ल यजुर्वेद अथवा वाजसनेयी संहिताके अनुयायियोंका श्रौतसूत्र कात्यायन कृत और गृह्यसूत्र पारस्कर कृत है धर्म्मसूत्रोंमें कर्मविधि तथा चारो वर्णोंके आचारका वर्णन है।
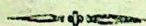
यज्ञ

यज् धातुमें नङ् प्रत्यय लगानेसे यज्ञ शब्द बनता है, जिसका यज् + नः = यज्ञः रूप छोटे विद्यार्थियोंको सन्धि पढ़नेके समय देखनेको मिलता है। यज् धातुके तीन अर्थ होते हैं (१) देवपूजा, (२) सङ्गतिकरण और (३) दान। इसलिये जिस किसो शुभ कार्यमें उक्त तीनमें कोई एक काम भो होता हो, उसे यज्ञ कहते हैं। परन्तु श्रौतसूत्रोंमें यज्ञका पारिभाषिक अर्थ है 'देवताओंके उद्देश्यसे हविका त्याग।' इसलिये देवताओंको हवि देना ही यज्ञ है। फिर भो यज्ञमें यज् धातुके अर्थसे सम्बन्ध रखनेवाले तीनो काम होते हैं।

साधारणतः कर्म दो प्रकारका होता है एक श्रोत और दूसरा स्मार्त्त। श्रौत कर्मका अर्थ है तोन वा अधिक अग्नियोंसे सम्बन्ध रखनेवाला अग्निहोत्र और स्मार्त्त कर्मका अर्थ है एक अग्निसे सम्बन्ध रखनेवाला कर्म यथा, नित्य होम, पञ्चमहायज्ञ, षोडश संस्कार आदि। स्मार्त्तकर्मको हो गृह्यकर्म कहते हैं। तीन अग्नि हैं आहृनीयाग्नि, गार्हपत्याग्नि ओर दाक्षिणाग्नि। गृह्याग्नि हो गार्हपत्याग्नि है। अवसथ भो घर वा गृह हो है। इसलिये गृह्याग्निसे जो यज्ञ होता है, वह आवसथ्य कहाता है। गृह्याग्निमें

समिधा रखना, देवताओंका तर्पण करना अथवा ब्राह्मणोंको दान देना गृह्यसूत्रानुसार यज्ञ है।

यज्ञके दो भेद और बताये गये हैं एक वैतानिक और दूसरा अवैतानिक। वैतानिक यज्ञ कई दिनोंतक चलता है और कई अग्नियोंसे होता है, इसलिये श्रौतयज्ञ है और अवैतानिक यज्ञ एक ही गार्हपत्याग्निसे होनेके कारण स्मार्त्तयज्ञ है। श्रौतयज्ञके मुख्य तीन भेद होते हैं (१) पाकयज्ञ, (२) हविर्यज्ञ और (३) सोमयज्ञ। पाकयज्ञ एक प्रकारका स्मार्त्त यज्ञ ही है, क्योंकि इसमें होम (प्रातः और सायं), स्थालीपाक, बलिवैश्वदेव, पितृयज्ञ, अष्टका और पशुकी गिनती होती है। परन्तु हविर्यज्ञमें अग्न्याधेय, अग्निहोत्र, दर्श, पौर्णमास्य, नवसस्येष्टि, चातुर्मास्य, और पशुबन्धका समावेश होता है। सोमयज्ञके अन्तर्गत अग्नि-ष्टोम, अत्यग्निष्टोम, उक्थ्य, षोडशी, वाजपेय, अतिरात्र और आप्तोर्याम हैं।

वैदिक कर्मकाण्डके दो विभाग और हैं एक इष्ट और दूसरा पूर्त्त। इष्टका सम्बन्ध स्वयं कार्यकर्त्तासे होता है अर्थात् स्वार्थसाधनके उद्देश्यसे जो कर्म किया जाता है, वह इष्ट कहाता है। जैसे 'स्वर्गका इच्छुक यज्ञ करे।' इस विधिसे यज्ञ करनेवाला अपने लिये स्वर्गका मार्ग खोलता है। परन्तु पूर्त्त परार्थ है। पूर्त्तका अर्थ बावली, कुआँ, तडाग इत्यादि बनवाना है, जो अपनी अपेक्षा दूसरोंके लाभार्थ बनवाये जाते हैं। इष्टके लिये किये जानेवाले कर्मोंकी संज्ञा इष्टि है, जैसे, नवसस्येष्टि, दर्शपौर्णमास्येष्टि, चातुर्मास्येष्टि इत्यादि इष्टि हैं। सोमयाग इत्यादि याग हैं। इष्टि छोटी और याग बड़ा होता है यह भी दोनोंका एक प्रभेद है।

यज्ञके चार अंग होते हैं (१) यजमान, (२) ऋत्विक्, (३) उपकरण और (४) हविर्द्रव्य। यजमान सपत्नीक होता है। कर्मानुष्ठानके लिये जिन पुरुषोंका वरण किया जाता है, वे ऋत्विक् कहाते हैं। ऋत्विजोंका काम वेदीके अन्दर होता है। वेदीके बाहरके कार्यपर नियुक्त अनृत्विक् कहे जाते हैं। ऋत्विक्में ये गुण होने चाहिये:—वह ऋषिसन्तान, विद्वान्, सदाचारी और प्रगल्भ (दृढ़ तथा कार्यतत्पर) हो तथा न तो उसका कोई अंग कम हो और न अधिक हो, दाहना बायाँ दोनो भाग समान हों, न वह कालाकलूटा हो और न भूरा ही हो। ये ऋत्विक् चार प्रकारके होते हैं होता, अध्वर्यु, उद्गाता और ब्रह्मा। होता ऋग्वेदद्वारा, अध्वर्यु यजुर्वेदद्वारा, उद्गाता, सामवेदद्वारा कायिक व्यापार करता है। ब्रह्मा त्रिवेदी होता है और इसका कार्य निरीक्षकका होता है। यह समय समयपर ऋत्विजोंको आज्ञा देता रहता है और जब कभी कोई प्रमाद हो जाता है, तो प्रायश्चित्त द्वारा उसका प्रतिकार करता है। यही यज्ञका अधिपति होता है। ऐतरेय ब्राह्मणमें होताके, तैत्तिरोय और शतपथ ब्राह्मणोंमें अध्वर्युके तथा ताण्ड्य ब्राह्मणमें उद्गाताके कर्त्तव्योंका वर्णन है। प्रत्येक ऋत्विक्के तीन तीन सहायक होते हैं। होताके सहायकोंको प्रशास्ता, अच्छावाक् और ग्रावस्तोता; अध्वर्युके सहायकोंको प्रतिप्रस्थाता, नेष्टा और उन्नेता तथा उद्गाताके सहायकोंको प्रस्तोता, प्रतिहर्त्ता और सुब्रह्मण्य कहते हैं। ब्रह्माके सहायक ब्राह्मणाच्छंसी, अग्नीध्र और पोता कहाते हैं।

उपकरणोंमें अरणिमन्थन सम्बन्धी अरणिनेत्र, स्वाहाकार

अश्विनोंकी बाहोंसे, पूषाके हाथोंसे, सरस्वती वाक्की (या सब देवताओंकी) नियम करनेवाली सम्हालमें—नेतृत्वमें—मैं नियमके लिये तुझे सौंपता हूँ। मैं वृहस्पतिके साम्राज्यसे हे अमुक शर्मन् या वर्मन् तेरा अभिषेक करता हूँ।' फिर अध्वर्य्यु तीन बार उच्च स्वरसे कहता है 'सम्राट् है यह अमुक शर्मा या वर्मा।' अभिषेक सिरके ऊपर सब ओर किया जाता है।

यहाँ सम्राट् नीचे लिखे मंत्रोंका पाठ या उनसे
उज्जिति (=बड़ी जीत) होम

करता है:—अग्निने एकाक्षर मंत्रसे प्राण जीता। मैं उसे जीतूं ॥ १ ॥ अश्विनोंने द्व्यक्षर मंत्रसे दो पैरवाले मनुष्य जीते। मैं उन्हें जीतूं ॥२॥ विष्णुने तीन अक्षरवालेसे तीनो लोक जीते। मैं उन्हें जीतूं ॥३॥ सोमने चार अक्षरवालेसे चार पैरवाले पशु जीते। मैं उन्हें जीतूँ ॥ ४ ॥ पूषाने पंचाक्षरसे पाँच दिशाएँ जीतीं; मैं उन्हें जीतूँ ॥ ५ ॥ सविताने छ अक्षरवालेसे छ ऋतु जीते। मैं उन्हें जीतूँ ॥६॥ मरुतोंने सप्ताक्षरसे सात ग्रामपशु (बैल, घोड़ा, भेड़, बकरा, खच्चर, गधा और मनुष्य) जीते। मैं उन्हें जीतूँ ॥७॥ अष्टाक्षरसे वृहस्पतिने गायत्री छन्द जीता। मैं उसे जीतूँ ॥८॥ नवाक्षरसे मित्रने त्रिवृत्स्तोम (ऋग्वेद ९।११) जीता। मैं उसे जीतूं ॥९॥ वरुणने दशाक्षरसे विराज् जीता। मैं उसे जीतूं ॥१०॥ इन्द्रने एकादशाक्षरसे त्रिष्टुभ् जीता। मैं उसे जीतूं ॥११॥ द्वादशाक्षरसे सब देवोंने जगती जीता। मैं उसे जीतूं ॥१२॥ वसुओंने तेरह अक्षरवालेसे तेरह गुना स्तोम जीता। मैं उसे जीतूं ॥१३॥ रुद्रने चौदह अक्षरवालेसे चौदह गुना स्तोम जीता। मैं उसे जीतूं

॥१४॥ आदित्योंने पन्द्रह अक्षरवालेसे पन्द्रह गुना स्तोम जीता। मैं उसे जीतूं ॥१५॥ अदितिने सोलह अक्षरवालेसे सोलह गुना स्तोम जीता। मैं उसे जीतूं ॥१६॥ प्रजापतिने सत्रह अक्षरवालेसे सत्रहगुना स्तोम जीता। मैं उसे जीतूं ॥१७॥

होमका शेष अन्न जब यजमान और सब ऋत्विज खा लें, उसके बाद यजमान अपनी चौकीसे उतरे। यूपमें लपेटे हुए वस्त्र अध्वर्युको दे दे। यजमान, यजमान-पत्नी और ऋत्विज इस यज्ञमें यजमानको दी हुई सोनेकी माला पहनते हैं। वह पहननेवालेके पास ही रह जाती है।

इस वाजपेय यज्ञके आदि, मध्य और अन्तमें कई यज्ञ सम्बन्धी काम कुछ सोमयागकेसे और कुछ विशेष होते हैं। ये साधारण लोगोंको रुचिकर नहीं हो सकते, इसलिये नहीं लिखे गये। इस प्रकरणमें शु० यजुर्वेदके नवें अध्यायके मंत्रोंके अर्थ आये हैं।

श्री हरिशङ्करकृत वंशावली

यतीन्द्रं गुरुं रामचन्द्रं प्रणम्य प्रभाभानुतुल्यं सदानन्दकन्दम् ।
सभापत्युरो जन्मना शङ्करेण स्ववंशावली वर्ण्यते निर्मलेयम् ॥१॥

जानातो नमऊ ततः समभवद्गोपीसुतो गोशलस्-
तस्माच्च ब्रह्मदत्तो भवत्सुतनयस्तस्मात्तु चन्द्राकरः ॥
एतस्माद्दिनकृत सभापतिरतस्तस्यात्मजः शङ्करो ।
येनेयम् सुविनोदनाय विमला वंशावली वर्ण्यते ॥२॥

जाना पाठक आत्मविद्द्विजवरः कृत्स्नं यजुर्योऽपठत् ।
ख्यातोभूदुपमन्युवंशतिलको जानापुरं शासनम् ॥
लेभे यो रणवीरदेवनृपतेस्तुल्याद्रघोः कर्मभिः ।
सन्तुष्टस्तदधीत वेदवचनैः क्षत्रं क्रियायां क्षमात् ॥३॥

बभूवतुः सुतौ तस्य नमऊ च गदाधरः ।
जानाख्याच्च स्वकर्माढ्यौ ब्राह्मणानां क्रियोचितौ ॥४॥

गोपीति नाम्ना नमऊतनूजो य आवसथ्यं कृतवान् द्विभार्य्यः ।
तस्याथ सूनोर्द्विजसत्तमस्य ख्यातं सुतानां नवकं बभूव ॥५॥

ज्येष्ठं कनिष्ठमेतेषां प्रायो नात्र प्रकीर्त्तितम् ।
अज्ञानाज्जन्मनाम्नोश्च क्वचिच्छन्दोऽनुरोधतः ॥६॥

नान्हू-भट्टू-गोशलनामधेयास्तथा प्रसिद्धः कवरस्तु जातः ।
इमे सगर्भा अपरे च शंकू संज्ञश्च नाम्ना रजऊ च कणूं ॥७॥
विद्याधरोऽभूदपि कामदेवो गोपीतनूजा इति ते नवैव ।
तेषां च विज्ञातमनपत्यजातं यथाश्रुतं वच्मि सतामिदानीम् ॥८॥

नान्हू शंकू च कर्णू त्रय इति कथिताः कामदेवस्तथैव ।
प्रख्यातो वंश एषां श्रुत इह न मया पद्धतिः कामदैवी ॥९॥
अस्त्येकैवात्समुद्रात्प्रथित शुभकृतिः पञ्चकानां परेषाम् ।
गोपीजानामिदानीं जगति मतिमतामन्ववायं ब्रवीमि ॥१०॥

विद्याधरश्च रजऊ गोशलः कवरू भट्टू ।
पञ्चानां प्रथितश्चैषां वंशः संकथ्यते मया ॥११॥

अथ रजऊवंशः

गोपीसुतो यो रजऊ पुरोक्तस्तस्याथ सूनुः कुशनू बभूव ।
तस्यात्मजौ लोलपराशराख्यो तज्जातका जाजमऊ वदन्ति ॥१२॥

इति रजऊवंशः ।

विद्याधरस्य नगई प्रभृतिः सन्ततिः स्मृता ।
यत्र ब्रह्मेति पदवी नृपदत्ता प्रवर्त्तते ॥१३॥
मृगये गोशलवंशं रजऊ सन्तानमादितः प्रोच्य ।
यौ भट्टूकवराख्यौ तदन्ववायं प्रवक्ष्यामि ॥१४॥

अथ गोशलवंशः ।

गोशलः स समभून्महायशो येन शास्त्रविधिना जितं जगत् ।
सम्बभूवुरखिलागमोचिताः सूनवः सुविदितास्त्रयस्ततः ॥१५॥
ब्रह्मदत्त इति देवदत्तको यज्ञदत्त इति नामधेयकाः ।
गोशलस्य सुधियः सुता अमी ब्रह्मदत्तस्य तनयानथ ब्रुवे ॥१६॥

मण्डनः कृष्णदत्तश्च तथा चन्द्राकरः स्मृतः ।
हरिदासश्चकरो लखमीदास इत्यपि ॥१७॥
ब्रह्मदत्तस्य तनयाः षडमी लोकविश्रुताः ।
चन्द्राकरस्य तन्मध्ये द्विभार्यस्य सुतान् ब्रुवे ॥१८॥

ज्येष्ठस्त्रियां दिनकरो भवदग्रजन्मा
चन्द्राकरस्य तनयोऽथ कनिष्ठपत्न्याम् ।
प्रोक्तः क्रमेण रमई च तथैव वेणी
लक्ष्मीपतिस्त्विति सुता अपरे त्रयोऽपि ॥१९॥
दिनकरो भुवि चान्द्रकरिर्विभौ
सकल शास्त्रमबुध्यत योऽनघः ।
हरिपदाब्ज - निषेवि मधुव्रतो
ऽप्यभवदस्य सुतत्रयमग्निवत् ॥२०॥
विद्यापतिश्चैव सभापतिश्च
खेमस्त्रयोऽमी दिनकृत्तनूजाः ।
ब्रवीमि तेषामथ पुत्रपौत्रान्
क्रमात् सदाचारविचारदक्षान् ॥२१॥

अथ विद्यापतेर्वंशमाह ।

ज्येष्ठः सुतोऽभूद्वनमालिनामा
तथा कृती लोकमणिश्च लालः ।
तथैव नाम्ना हरिवल्लभश्च
विद्यापतेः कृष्णमणिः कनिष्टः ॥२२॥
पुत्रौ प्रसिद्धौ बनमालिनाम्नस्-
तौ नीलकण्ठश्च दिवाकरश्च ।
प्रोक्तौ तथा लोकमणेः सुवृत्तौ
द्वावात्मजौ बन्धनलक्ष्मणाख्यौ ॥२३॥
न स्थितं किमपि लाल शर्मणस्-
तोक मात्रकमिहेश्वरेच्छया ।

आत्मजौ हरिवल्लभस्य तिष्ठत:
पद्मनाभ इति माधवोऽपि च ॥२४॥
पुत्र: कृष्णमणे: ख्यात: परमानन्द संज्ञक: ।
वसन्मलिपुराग्रामे गौड़देशे स वर्त्तते ॥२५॥

इति विद्यापतेर्वंश:

अथ सभापतेर्वंशमिहोच्यते ।

प्रथमज: कथितोऽत्र भगीरथ:
तदनुजो हरिशङ्कर इत्यसौ ।
निगदित: किल येन निजान्वय:
............................॥२६॥

सभापतिसुतोऽभवद्द्विजवर: सतामग्रणी-
र्भगीरथ इतीह य: प्रभवतश्च तस्यात्मजौ ।
विभाति कमलाकरस्तदनुजस्तथा वर्त्तते
चतुर्भुज उभावपि प्रथयतां सुखं सन्ततिम् ॥२७॥
विराजतेऽसावनिरुद्ध नामा रत्नेश्वरो यत्सहजश्चकास्ति ।
सुताविमौ तौ हरिशङ्करस्य सुखान्वितौ वंशौकरौ भवेताम् ॥२८॥

इति सभापतेर्वंशकथनम्

अथ खेमस्य

सभापतेस्सगर्भको लघु: सुखेमनामक: ।
त्रयश्च तस्य सूनवो विभान्ति चन्द्रभानुमत् ॥२९॥
विजयते मकरन्द इहाग्रजस्-
तदनुजौ मधुसूदनकल्याणौ ।
त्रय इमे किल खेमसुता: स्मृता
अथ वदामि तदन्वय सम्भवान् ॥३०॥

भूयासुर्मकरन्द सूनव इमे दामोदरः केशवो ।
विख्यातः शिवरामकः त्रय इमे प्राप्तायुषः पुत्रिणः ॥
एधन्तां मधुसूदनस्य च तथा श्रीराममद्राभिधः ।
सर्वेशो जगदीश इत्यभिमतः पुत्रास्त्रयोऽमी चिरं ॥३१॥
श्रीकल्याणकरस्य सप्ततनयास्सन्ति द्विभार्यस्य ते ।
लक्ष्मीकान्त इति स्मृतः प्रथमजो वीरू च गङ्गाधरः ॥
ज्येष्ठायां च तुलाभिधान उदितो वध्वां च सीतापतिः ।
लघ्व्यां चाथ धराधरस्तनूजोऽपि प्राणनाथस्सुधीः ॥३२॥
इति खेमस्यवंशकथनम्

अथ रमईवेण्योर्वंशवर्णनम्

कथिता दिनकृतपुत्राः ससन्तानास्त्रयो ऽधुना ।
प्रोच्यते रमईवेण्योर्वंशोवंश धुरन्धरः ॥३३॥
चत्वारो रमईपुत्रा हरी च हिरऊ तथा ।
शङ्करोर्वीधरौ सर्वे बरियायां निवासिनः ॥३४॥
हरिपुत्र दिनमणिर्गङ्गा च यशनस्तथा ।
मद्धावीशा च पञ्चैते प्रसिद्धास्सन्ति वैदिकाः ॥३५॥
अभूद् द्विजाग्रो हिरऊ च तस्य तारापतिः ज्येष्ठसुतो विभाति ।
उदो च नाम्ना कितऊ तथैते दीर्घायुषस्स्युस्सहपुत्रपौत्रैः ॥३६॥
तारापतेस्सुतः ख्यातो वैष्णवः शिवरामकः ।
हरिनारायणश्चोभौ भवेताम् सुखिनस्सदा ॥३७॥
जगदीशः खिमानन्दो रघुनाथस्त्रयस्सुताः ।
शङ्कराद्रमईसूनोस्सम्भूता राजपूजिताः ॥३८॥
उर्वीधरस्य द्वौ पुत्रौ श्रीरामो रमई तथा ।
स सन्तानौ कुशलिनौ स्यातां धनसमन्वितौ ॥३९॥
इति रमईवंशः

अथ वेणीवंशः

वेण्यात्मजौ वेदविदौ प्रसिद्धौ
जातौ तु रत्नाकर चन्दनाख्यौ ।
तयोरपत्यान्यधुना क्रमेण
रत्नाकरस्य च तथा प्रथमं ब्रवीमि ॥ ४० ॥
चूड़ामणिः रात्नकरिश्चकास्ति
तस्यात्मजौ तौ गुणिनौ सुशीलौ ।
पुत्रान्वितौ द्वौ चिरजीविनस्तौ
जनार्दनाख्यः शुकदेवकश्च ॥ ४१ ॥
चन्दनस्य सुतौ प्रोक्तौ बलनश्च खगनस्तथा ।
तदात्मजावपि ब्रूमः ससन्तानौ सुखान्वितौ ॥ ४२ ॥
चन्दनस्य बलनो ऽनपत्यकोऽभूत्
सुतोऽस्य खगनस्य तदग्रिमः ।
वर्त्तते च खगनस्य चान्दने-
रग्निचित् स घनराम नामकः ॥ ४३ ॥

इति वेणीवंशः

लक्ष्मीपतिश्चतुर्थो यश्चन्द्राकरसुतः स्मृतः ।
न कश्चिदस्ति सन्तानो बाल्ये एव मृतस्तु सः ॥ ४४ ॥

इति ब्रह्मदत्तात्मजचन्द्राकरस्यवंश वर्णनम्

अथ कृष्णदत्तहरिदासयोः

कृष्णदत्त हरिदाशसर्मणोर्वंशजा अनुदितास्तु नामतः ।
तीवराशि विषयेष्वितस्ततः सन्ति घाटमपुरेऽपि स प्रजाः ॥४५॥

इति कृष्णदत्त हरिदासयोः

अथ लक्ष्मीदासः

लक्ष्मीदासो ब्रह्मदत्तात्मजोऽभूत्
तस्माज्जज्ञे, भास्करो वेदवेत्ता।
देवीदासो भास्करात्सम्बभूव
तत्पुत्रौ श्रीपतिः पुण्डरीस्थः ॥ ४६ ॥

इति लक्ष्मीदासः

ब्रह्मदत्ततनयास्तु यः स्मृतः
सम्बभूव चकरोऽनपत्यकः।
मण्डनस्य विमलस्य सन्ततिः
कथ्यतेति विमला यथामतिः ॥ ४७ ॥

अथ मण्डनस्य वंशकथनम्

ज्येष्ठः परशुरामाख्यो घाघश्च हरिरामकः।
मण्डनस्य सुता एते तेषां वंशमतः शृणु ॥ ४८ ॥

श्रीमण्डनात्परशुराम इति प्रसिद्धः
तस्याथ सूनुरभवद्भुवि रामचन्द्रः।
पुत्रो बभूव धनवानथ केशवोऽस्य
तस्यात्मजौ च रमणू खर्गू प्रसिद्धौ ॥४९॥

मण्डनस्य हरिराम नामकस्-
सूनुरस्य च जनार्दनः स्मृतः।
तस्य सूनव इमे त्रयस्स्मृतास्
तान् ब्रवीमि ससुतान्यथामतिः ॥ ५० ॥

वासु च गङ्गाऽपि च मान संज्ञास्
त्रयस्सुताश्चेति जनार्दनस्य।

वासूसुतो लक्ष्मण नामधेयस्-
स उत्कले तिष्ठति सानुजश्च ॥ ५१ ॥
गङ्गासुतोऽभूद्रविदास नामा
तस्यात्मजौ लालगुलालकौ स्तः ।
मानस्य पुत्रो छंगऊ प्रतिष्ठः
सपुत्रकः सोऽस्ति बरीनगर्याम् ॥ ५२ ॥
इति ब्रह्मदत्तवंश वर्णनम् ।

अथ देवदत्तवंशकथनम्

अथातो देवदत्तस्य साधवः सप्तसूनवः ।
प्रत्येकं कथयिष्यामि तेषां नामान्यथा शृणु ॥ ५३ ॥
हरिकर हरिहर दिनकर मतिकर संज्ञामराऽनिरुद्धाख्याः ।
रायश्चैते ख्यातास्सप्त सुताः देवदत्तस्य ॥ ५४ ॥
द्वौ पुत्रौ हरिकरजौ जियनोमधई च तत्सुतान्क्रमः ।
जियनसुतोऽभूद्वासू तस्य च पुत्रास्त्रयो जाताः ॥ ५५ ॥
धर्मदासो भवदासः खेमानन्द इति स्मृताः ।
उदीच्यां दिशि वर्त्तन्ते तदपत्यान्यनेकशः ॥ ५६ ॥
हरिकरस्य सुतो मधईत्वभूत्सपुरुषोत्तमरत्नाकरौ सुतौ ।
अजनयच्च तयोरपि वंशजा लखनऊ नगरे निवसन्ति ते ॥५७॥
इति हरिकरस्य

दिनकरमतिकरराऊवंशो ज्ञातो न नामभिर्यस्मात् ।
लिखितो न मया तस्मात् ख्यातोऽपि न केनचिल्लोके ॥ ५८ ॥
हरिहरादभवद्धरिदत्तको ऽस्य
च मणोरमणश्च सुतावुभौ ।

मणिसुतावथ सङ्गमशङ्करौ
रमणसूनुरभूदुदयी गुरुः ॥ ५९ ॥

इति हरिहरस्य

दैवदत्ति रमरस्तु वर्त्तते रामदास इति तत्सुतोऽभवत् ।
तत्सुतो जगनसंज्ञकोऽग्निचित् सोदरस्य किल हेमकृत् स्मृतः ॥६०॥

श्रीकान्त हर्षसारंगादयो जगनसूनवः ।
ब्रह्मावर्त्ते भद्रसे तज्जाता अद्यापि सन्ति च ॥६१॥

गङ्गाजगनहृदयौ रामकृष्णस्तृतीयकः ।
चतुर्थो बबुआ चैते सुता हेमकरस्य च ॥ ६२ ॥

अथामरस्य द्वितीयात्मजवंशः

यो देवदत्तादमरस्तु जातो
लक्ष्मीकरस्तस्य सुतो बभूव ।
तस्याथ पुत्रो जनि कृष्णभद्रो
पुत्रोऽस्य जातोऽपि च शङ्कराख्यः ॥ ६३ ॥

अथ स्मृतो लोकमणे र्द्वितीयो
गोपाल नामा जगतस्तृतीयः ।
इमे सुताः शङ्कर संज्ञकस्य
पुरैनिया ग्रामनिवासिनः स्युः ॥ ६४ ॥

अभूद्देवदत्तस्य पुत्रोऽनिरुद्धः तस्य वंशोऽथ कथ्यते ।
गणेशो महेशो महादेव आशानन्दः पद्मनाभो भवानीति नाम्ना ॥६५॥
षड़ेतेऽनिरुद्धस्य पुत्राश्चतेषां महेशो महादेव आशास्त्वपुत्रः ।
गणेशपुत्रो जगदीश संज्ञो सुखो स पुत्रो बिहटां स्थितः सः ॥ ६६ ॥

पद्मनाभतनयश्चकन्दनो रामदत्तकमलापतिस्तथा ।
... ... ॥ ६७ ॥

स्मृतः कन्दनः पद्मनाभस्य सूनुः तथा कन्दनस्यात्मा वेद संख्याः

... ... ॥ ६८ ॥

ढोढनश्च बलाख्यश्च कला संज्ञो दमा तथा ।
कन्दनस्य सुता एते चत्वारो भुवि विश्रुताः ॥ ६९ ॥
ढोढनस्तूत्पलारण्ये बिहटायां चिरं वसन् ।
इटाव नगरे रम्ये बला पुत्रोस्ति सात्मजः ॥ ७० ॥
कला एकडला ग्रामे द्वौ पुत्रौ तस्य सात्मजौ ।
सुन्दरः परमू चेमौ भूयास्तां चिरजीविनौ ॥ ७१ ॥
कन्दस्य सुतो योऽसौ दमा तुर्यः प्रकीर्त्तितः ।
स तु बौधौं समासाद्य वर्त्तते स परिग्रहः ॥ ७२ ॥

इति कन्दस्य

अथ रामदत्तकः

जयदेवो देवमणो रामदत्तसुतावुभौ ।
सहात्मजैः कटोलीस्थौ राजराजप्रपूजितौ ॥ ७३ ॥
कमलापति पुत्रोऽसौ मधुरामः सहात्मजः ।
सेम रौतापुरे नित्यं तिष्ठते स महामतिः ॥ ७४ ॥

इति रामदत्तकमलापती

अथानिरुद्धस्य पुत्रो भवानीदासः

तस्य सुतः कदरोऽस्ति प्रसिद्धो दरियाबादे
कीर्त्तितास्त्रय इमे यथाक्रमं ब्रवीमि तदपत्यं सम्भवान् ।

इति देवदत्तस्यवंश वर्णनम्

अथ यज्ञदत्तवंशकथनम्

कवेर्गोशलस्यात्मजश्चन्द्रकीर्त्तिर्वभौ याज्ञिको यज्ञदत्तश्च तस्य ।
महाशर्म विष्णूकरिष्णूसहिष्णू सुतौ वाजपेयस्य जिष्णू अभूताम् ॥७५॥

यज्ञदत्तस्य द्वौ पुत्रौ महाशर्मविष्णुशर्माख्यौ ।

अथ महाशर्मणः

महाशर्मात्मजा जातास्त्रयस्त्रेताग्नि तेजसः ।
जयशर्म हरिब्रह्मा गदाधर इति क्रमात् ॥७६॥
हरिब्रह्माऽनपत्योऽभूद्वंशोऽथ जयशर्मणः ।
वर्ण्यते यत्र सम्भूतो देवरामो द्विजाग्रणीः ॥७७॥
देवरामस्य तनयो जातः कुलमणिः कृती ।
यथार्थनामा धर्मिष्ठः सोमयाजी द्विजाग्रणीः ॥७८॥
काशीराम सुतो ज्येष्ठो मणीरामस्तु मध्यमः ।
गोपीनाथस्तदनुजो कनीयान्मथुरापतिः ॥७९॥

अथ काशीरामस्य

षडाम्नायांग तुलनाः काशीरामाङ्गजाः स्मृताः ।
ज्येष्ठः प्राणमणिः श्रीमांल्लघु चूडामणिः स्मृतः ॥८०॥
रघुनन्दन संज्ञोऽथ यदुनन्दनसंज्ञकः ।
गङ्गामणिस्तनुजौ द्वौ लक्ष्मणस्तदनन्तरम् ॥८१॥
प्राणनाथसुतो ज्येष्ठो उपेन्द्रहरि विश्रुतः ।
मध्यमो भवदत्तोऽभूदादिशर्मा कनिष्ठकः ॥८२॥
चूड़ामणेस्सुतास्तेषां ज्येष्ठो जातः प्रजापतिः ।
दामोदरस्तदनुजो तदूनो मधुसूदनः ॥८३॥
गोवर्द्धनादयो जाता रघुनन्दनदेहजाः ।
यदुनन्दनतो जाता एकनाथादयस्सुताः ॥८४॥
वीरेश्वरादयो जाता गङ्गामणि सुतानन्वये ।
लक्ष्मणस्य सुताश्चापि ज्ञातव्या नामदर्शिभिः ॥८५॥

इति काशीरामस्य

अथ मणीरामवंशकथनम्

मणीरामसुतो ज्येष्ठो ह्यजायत मनोरथः ।
बलभद्रो लालमणिर्ज्येष्ठपत्न्यां ते त्रयःस्मृताः ॥८६॥
कनिष्ठायां भानुमत्यां महामुनिरजायत ।
मित्रानन्दस्तदनुजो पञ्चैते मणिरामजाः ॥८७॥

इति मणिरामजाः

गोपीनाथ सुतो ज्येष्ठो पीताम्बर उदारधीः ।
गौरीनाथस्तदनुजो भानुदत्तस्ततोऽवरः ॥८८॥
तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च ज्ञातव्या नामवेदिभिः ।
मथुरानाथात्मजाश्चैव चत्वारो चारुवर्च्चसः ॥८९॥
लक्ष्मीनाथोऽभवज्ज्येष्ठस्तेषां कृष्णोऽनुजस्ततः ॥
मणिकृष्णस्तदनुजस्तस्य विश्वम्भरोऽनुजः ।
भवितारः पराविज्ञैर्ज्ञातव्याश्च विचक्षणैः ॥९०॥

अथ गदाधरस्य

विख्यातौ तु गदाधरस्य तनयौ ज्येष्ठः स्मृतिस्तिर्मलो ।
गङ्गाराम इति द्वितीय उदितः साधुस्सतां वल्लभः ॥९१॥
पुत्रौ द्वावथ तिर्मलस्यगदितौ भागीरथश्चात्मजः ।
श्रीमान् सत्तनयान्वितो विजयते सोमेश्वरस्तल्लघुः ॥९२॥
गङ्गारामस्य तनयः कृपारामो विराजते ।
खटोलायान्तु तज्जातास्सन्ति साहिपुरेऽपि च ॥९३॥

इति गदाधरस्य

इति महाशर्मवंशवर्णनम्

अथ विष्णुशर्मणः

स्वराट् सम्राड्विष्णुरभूत् षट् जातास्तस्य सूनवः ।
एकैकशः ससन्तान नाम पूर्वं ब्रवीमि तान् ॥९४॥

विष्णोः सुतो यो हरदेव ओझा छङ्गे च गङ्गे च सुतौ तदीयौ ।
गङ्गे ऽनपत्योवत् वर्त्ततेऽस्म छङ्गेऽथ सद्वंशकरः प्रसिद्धः ॥९५॥
छङ्गेसुतो श्रीहरदेवपौत्रो यो दीक्षितः प्रीतिकरश्चकास्ति ।
भ्राता कनीयानथ तस्य भाति श्रीरामभद्रोऽर्चित रामचन्द्रः ॥९६॥
अभूदपुत्रो बलभद्र नामा विष्णोस्तनूजोऽखिलशास्त्रवेत्ता ।
श्रीलक्ष्मणः विष्णुसुतस्तृतीयः कृष्णो सुतोऽभूदथ लक्ष्मणस्य ॥९७॥
कृष्णोऽग्निचित् यज्ञरुचिस्समसीत्तस्याथ पुत्राः प्रभवन्ति पञ्च ।
पृथ्वोधरो ज्येष्ठतयास्तु तेषु हीरा च वोशाधरणीधरश्च ॥९८॥
तारापतिश्च क्रमशः प्रसिद्धाः कृष्णस्य पञ्चैव सुतामयोक्ताः ।
ते चापि सन्तानधनायुरिष्टिः सुखान्वितः साहिपुरे वसन्ति ॥९९॥
विष्णोश्चतुर्थो शिवशर्मनामा पुत्रस्तु काशीति सुतोऽस्य जातः ।
टीकाभिधस्तस्य सुतो विभाति द्वितीय सूनुर्जयकृष्णसंज्ञः ॥१००॥
विष्णोस्तनूजावपरौ स्मृतौ च द्वौ देवशर्मा हरिकेशवश्च ।
बौर्धी समासाद्य पुरीं तदीय वंशोद्भवास्सन्ति सपुत्रपौत्राः ॥१०१॥

इति विष्णुशर्मवंशकथनम्

अथ कवरवंशवर्णनम्

घाटम नाम्नो जातः कवरस्य सुतस्य चाष्टतनयास्तु ।
याता लोके ख्यातिं ज्येष्ठभ्रातृकतयाथ तान् ब्रूमः ॥१०२॥
सुरेश्वरो जौनकेदारसंज्ञौ कर्मण्यथो लक्ष्मणभैरावाख्यै ।
खर्गाभिधो आनंद संज्ञकश्चेत्यष्टौ सुताघाटमनामकस्य ॥१०३॥
अष्टभ्रातृषु केदारः कर्मणिः स्वर्ग संज्ञकः ।
एषां प्रायो न वंशोऽस्ति प्रसिद्धः पृथिवीतले ॥१०४॥
सुरेश्वरस्य तत्रादौ वर्ण्यते यत्र सम्भवाः ।
इतरेषामपि तथा यथामति यथाश्रुतम् ॥१०५॥

देवर्षि पीताम्बर हरिहराख्याः खेमाभिधानोऽपि च विश्वरूपः ।
तथैव जातो मकरन्दनामा सुरेश्वरस्यापि सुताः षडेते ॥१०६॥
तेषां बहुत्वात्प्रत्येकं न शक्यं वर्णनं यतः ।
नाम्नामज्ञानतश्चापि दिङ्मात्रं क्रियते ततः ॥१०७॥
वंशो देवऋषेर्यस्तिवराशिं वसति सोऽद्यापि ।
पीताम्बरस्य तु पुनर्डोमनपुर्यां समीपापा ॥१०८॥
डाळामऊ अमाये हरिसिंहस्य लखनऊ खेमस्य ।
परियापुरे प्रसिद्धः सन्तानो विश्वरूपस्य ॥१०९॥
मकरन्दस्य तथासौ ब्रह्मावर्त्तेऽपि ख्यौराख्ये ।
संक्षेपेण यथामति वंशः प्रोक्तः सुरेश्वरस्येति ॥११०॥
जौनस्य वंशजाः प्रोक्ता देवदासादयस्सुखम् ।
मलावै सुपुरे ते तु वसन्तः सन्ति सान्वयाः ॥१११॥
भैरवस्य व्रजानन्दादयोऽन्वय समुद्भवाः ।
वसन्ति साँडी नगर्याम् स्वकर्मनिरतास्सुखम् ॥११२॥
अथो लक्ष्मणस्यात्मजो देवशर्मा
तथा खेमकर्णः कृती खेचरश्च ।
त्रयोऽमी स पुत्रा वसन्तिस्म साँडीं
सदाचारयुक्तास्सदा राजपूज्याः ॥११३॥

× × × ×

पुखई तस्य पुत्रोऽस्ति ज्योतिर्वित्केशवस्सुधीः ।
तदात्मजो नरहरिर्भाति यज्ञार्थतत्ववित् ॥११८॥
नारायणाख्यः प्रथमः प्रदिष्टस् ततो द्वितीयो जयराम नामा ।
प्रोक्तस्तृतीयोऽपि तुळात्रयोऽमी बुद्धीसुताखेमकरस्य पौत्राः ॥११९॥

इत्युपमन्यु वंशावल्यां कवरवंश कथनम्

अथ भट्टस्य वंशकथनम्

गोपोसुतो योऽसौ भट्ट तुर्यः प्रकीर्त्तितः ।
यथाश्रुतं स सन्तानस्तस्य वंशोऽथ कथ्यते ॥१२०॥

भट्टूतनूजोऽस्य दिवाकरोऽथ पश्चात्समाजास्ते रविदास पूर्वः ।
जातोऽर्चितोहोरिलकीश संज्ञौ ख्यातः कनीयान् जनको बभूव ॥१२१॥

पञ्चेति पुत्राश्च दिवाकरस्य सन्तानमेषां कथयाम्यथातः ।
तेषूच्यते ज्येष्ठतयासु तेषु, सताम्मतोऽसौ रविदासवंशः ॥१२२॥

अभूत् पृथिव्यां रविदाससूनुश् श्रीमान् जगन्नाथ इति प्रसिद्धः ।
यो वाजपेयं कृतवांस्त्रिवेदस् तस्यत्विमे पञ्चसुता बभूवुः ॥१२३॥

कीशस्य पुत्रो मधुसूदनोऽभूत् तज्जातका रत्नपुरे वसन्ति ।
तस्यार्चितस्यात्मज सम्भवाश्च वसन्तेऽध्वर्य्यर्य्यामपि रत्नपुर्याम् ॥१२४

होलीयपुत्रौ प्रथितौ धरातले
लीलाभिधानश्च दमोदराह्वयः ।
लीलाख्यस्य च चूड़ामणिरस्यापरो यो
दामोदरस्यापि सदत्रिमस्सुतः ॥१२५॥

जनकस्य सुतो जज्ञे भवानीदास संज्ञकः ।
तत्सूनुः शङ्करो जातो हंसरामस्तु शाङ्करिः ॥१२६॥

हंसरामस्य पुत्रास्तु द्विपत्नीकस्य तु त्रयः ।
ज्येष्ठपत्न्यां समुद्भूतौ द्वौ मोहन खिलेश्वरौ ॥१२७॥

कनिष्टपत्न्यां परमकृष्ण संज्ञक तृतीयकः ।
एवं त्रयाणां सन्ताना भूयासुर्भूयशो भुवि ॥१२८॥

इति भट्टवंशः । इति नमऊ

अथ गदाधरस्य वंशवर्णनम्

गदाधरस्य वंशोऽथ जानापुत्रस्य कीर्त्तये ।
यद्वृत्तिर्नसुराग्राम तत्सुतान् चतुरः शृणु ॥१२९॥
अनिरुद्धश्च गोविन्दो पद्मनाभ विपू इति ।
तज्जातास्सन्ति बैजुआमऊ नसुरायां च पाठकाः ॥१३०॥
ये ये मुख्यतया ख्याता वंशेऽस्मिन् पूर्वपूरुषाः ।
तत्तद्वंशभवास्स्वीयाञ्जना विद्युस्ततस्ततः ॥१३१॥

इति गदाधरस्य

इत्युपमन्युवंशे जानावंशकथनम् ।

नोट—श्रीहरिशङ्करजीने अपने वर्णनमें इस वंशावलीमें लिखा है कि जानाके पुत्र नमऊ, इनके गोपी, गोपीके गोशल, गोशलके ब्रह्मदत्त, इनके चन्द्राकर तथा चन्द्राकरके दिनकर और इनके सभापति तथा सभापतिके पुत्र शङ्कर वा हरिशङ्कर हुए। इस प्रकार ये जावाजीसे नवीं पीढ़ीमें थे। तबसे आज प्रायः १५ पीढ़ियां और हुई हैं। इस प्रकार यह वंशावली कोई ३०० वर्ष पहले लिखी गयी थी। उस समय लखनऊमें प्रीतिकर और रामभद्र वाजपेयी थे और प्रीतिकरजी सोमयाग कर चुके थे, परन्तु उनके पुत्रादिका वर्णन नहीं मिलता। इस वंशावलीमें ११४, ११५, ११६ और ११७ संख्यक चार श्लोक नहीं हैं और २६, ६७ तथा ६८, संख्यक श्लोक अधूरे हैं। हमें जो दो प्रतियां इस वंशावलीकी मिलीं, उन दोनोंमें वही त्रुटि देखनेमें आयी। इस लिये ज्योंकी त्यों छोड़ देनी पड़ी।

———

श्रीपरमकृष्णरचितवंशावली

मङ्गलाचरणम्

प्रत्यूहव्यूहतिमिरमिहिरं भक्तवत्सलम् ।
पार्वतीनन्दनं वन्दे वरदं द्विरदाननम् ॥१॥
ब्रह्मापि यं समाराध्य निर्माति भुवनत्रयम् ।
तं चेतसि निधायेशं कुर्वेऽहं वंशवर्णनम् ॥२॥

रचनाकालः कविपरिचयश्च

शशिनगाह्विधरामित वर्षे, माधवे विधि तिथौ बुधवारे ।
काशिनाथतनयेन वर्ण्यते, स्वान्वयः परमकृष्णशर्मणा ॥३॥

प्रामाण्यम्

पूर्वलेखनमालोक्य साम्प्रितं वृद्धवंशजैः ।
सम्यङ् निर्णीय निखिलं व्यवसायः कृतो मया ॥४॥

आरम्भः

वशी वसिष्ठस्तनयो विधातुरयोनिजो योऽजनि तस्य वंशे ।
नाम्नोपमन्युर्विदितो विमन्युर्मुनिः समाराधितमन्युरासीत् ॥५॥
तथा हि पूर्वं वशिनो वसिष्ठाद् अभूदिहेन्द्रप्रमदो महर्षिः ।
तस्याभवद्यस्तनुजोऽभरद्वसुः वंशाब्जभास्वानुपमन्युरस्मात् ॥६॥

उपमन्युसुतो ह्यासीदौपमन्यवसंज्ञकः ।
देवद्विजस्ततस्तस्मादान्यवो दीनवत्सलः ॥७॥
आन्यवात्पिप्पलो जज्ञे नीरन्ध्रः पिप्पलात्मजः ।
नीरन्ध्रादंशुमानासीद्विद्युतस्तत्सुतः स्मृतः ॥८॥

विद्युतादञ्जनामा भून्मिहिरोऽञ्जस्य वंशकृत् ।
मिहिरात्प्रजापतिः पुत्रः प्रजापतिरिवापरः ॥९॥
प्रजापतेस्तु चत्वारो बभूवुरिह सूनवः ।
चतुर्णामपि विश्वेशः प्रथमो विभवस्ततः ॥१०॥
तृतीयः पुण्डरीकाक्षो दुर्धर्षश्चरमो मतः ।
विश्वेशान्मानवो जज्ञे जज्ञाते तस्य चात्मजौ ॥११॥
ऐलासवज्रौ तनयौ ऐलासाद् द्वैतसंज्ञकः ।
पुत्रो बभूव द्वैतस्य गुणस्तस्मात् क्षमाभिधः ॥१२॥
क्षमापुत्राः बभूवुः षट् वराम्नायाङ्गवेदिनः ।
तपस्विनः सदाचारास्तेषां नामानि वच्म्यहम् ॥१३॥
निर्दोऽथ धाता पुनरुच्यतेऽनुजो
हलञ्जिदाख्यो कमलाभिधोऽपरः ।
पुनस्तथा भास्कर एव पञ्चमः
षष्टः सुत्रामा सुयशस्करः पितुः ॥१४॥
निर्दस्य बिल्वदायादो बिल्वस्यापि निधिः स्मृतः ।
निधेः पुत्रः पर्वतोऽभूत् पर्वतस्य सुतास्त्रयः ॥१५॥
क्षत्रस्तत्रादिमः प्रोक्तः महेशो मध्यमो मतः ।
चरमः कुन्तलश्चासीत् क्षत्रस्य शुनकः सुतः ॥१६॥
शुनकस्य सुताः पञ्च बभूवुरिति विश्रुताः ।
सुबालः प्रथमो नाथमुद्गरावपरौ स्मृतौ ॥१७॥
जनको धराधर इति सुबालाद्देवसंज्ञकः ।
देवस्य भास्करः सूनूरत्नो भास्कर उच्यते ॥१८॥
रत्नस्य मोहनामासीदष्टौ मोहस्य सूनवः ।
तेजस्विनोऽतिविख्याता नाम्ना ते पालका इव ॥१९॥

उल्लासब्रह्मानिलहरिमुनिहीरास्तथा भरद्वाजाः ।
ख्यातो गणेशनामा मित्राख्यश्चेत्यष्टमो ज्ञातः ॥२०॥
उल्लासपुत्रः सञ्जीवः सञ्जीवस्य बलस्सुतः ।
बभूव येन सञ्जीववंशो विपुलतां गतः ॥२१॥
बलस्य बालो हि महाबलाख्यो
महाबलात्सप्त सुता बभूवुः ।
शक्तिस्तथा पीवरसंज्ञकोऽन्यः
सीतापतिर्जन्तुरथो महाद्युतिः ॥२२॥
सुषेण नाम्नाथ सुपूर्व एव
जज्ञेऽङ्गज श्रेयसमी सगर्भाः ।
शक्तेस्सहस्रांशु समान कान्त्या
प्रकाशितोऽसौ रविरात्मजोऽभूत् ॥२३॥
रवेरभूत् केशवसंज्ञया सुतो
ज्येष्ठः कनिष्ठो भरताभिधो ऽपरः ।
द्वावप्यभूतां भुवि मानवोत्तमौ
विख्यातकीर्त्ती निजधर्मवर्त्तिनौ ॥२४॥
केशवस्याङ्गजो नाम्ना कुमारस्तस्य चात्मजः ।
जज्ञे हलधरस्तस्य दायादः सागराभिधः ॥२५॥
चत्वारस्सागरस्यासन् दायादास्तान्ब्रवीम्यहम् ।
कोलाहलोऽभूत् प्रथमो द्वितीयस्सुखसंज्ञकः ॥२६॥
गौरीपतिस्तृतीयो ऽभूच्छिवनाथाभिधोऽपरः ।
कोलाहलस्य सुभुजः पुत्रोऽभूत्तस्य षट् सुताः ॥२७॥
यविष्ठो नियमश्चाथ कुशलः शेनसंज्ञकः ।
गुरुशिक्षकनामानि षडमी तपसोज्ज्वलाः ॥२८॥

यविष्ठस्य सुतो नाम्ना गोविन्दस्तत्सुतो हरिः ।
हरेरानन्द नामाभूदानन्दादास मानसः ॥२९॥
मानसस्य सुतः शान्तो दुर्लभस्तस्य चात्मजः ।
तस्य पुत्रास्तु चत्वारस्तेषां नामेह वर्ण्यते ॥३०॥
द्वन्द्व उग्रो दुराधर्षो गङ्गानामा चतुर्थकः ।
... ... ॥३१॥
द्वन्द्व पुत्रोऽम्बरस्तस्य जज्ञाते द्वौ सुतौ वरौ ।
... ... ॥३२॥
विलासनामा प्रथमो द्वितीयो देवसंज्ञकः ।
... ... ॥३३॥
विलाससूनुः शिवसंज्ञकोऽभूद्
गोवर्द्धनस्तस्य बभूव सूनुः ।
गोवर्द्धनस्यापि बभूव चन्द्रो
नीहारनामाऽजनि चन्द्रसूनुः ॥३४॥
वंशदोऽथ महागुण्यो दयालुर्दीक्षिताग्रयः ।
काशी पुनः पतिस्तत्त्वो नारायणोऽथ भूधरः ॥३५॥
भवाभिधोऽथ संयमो निहारसूनवो दश ।
प्रकीर्त्तिता अमी मया दिगीशधामसम्मिताः ॥३६॥
वंशदस्य च धनदस्तस्य पीताम्बरस्सुतः ।
पीताम्बरस्य तनयास्त्रयस्ते भूरिवर्चसः ॥३७॥
नलो बभुव प्रथमः पुरुः पुरुजितोऽप्यथ ।
नलस्य कुलनामाऽभून्मारुतः कुलनन्दनः ॥३८॥
ज्येष्ठो विद्याधरो जज्ञे पुनराह्लादसंज्ञकः ।
प्रह्लादनामाऽवरजो मारुतस्य सुतास्त्रयः ॥३९॥

विद्याधरस्य तनयो लक्ष्मणस्तत्सुतः शुकः ।
बभूव परमानन्दमग्नः शुक इवापरः ॥४०॥
शुकाङ्गजौ द्वावनिरुद्धधीरो ततोऽनिरुद्धस्य बभूव शङ्खः ।
सङ्कर्षणः शङ्खसुतोऽथ जज्ञे सङ्कर्षणस्याथ दिविस्तनूजः ॥४१॥
दिवेः पुत्रो देवदत्तो देवदत्तस्य षट् सुताः ।
चिन्तामणिरचलाऽख्यः सुकर्मा च महासुखः ॥४२॥
निरुद्धश्शन्तनुर्नाम मयैते परिकीर्त्तिताः ।
चिन्तामणेः शम्भुरभूत्तनयोऽस्य त्रयस्सुताः ॥४३॥
शुभाभिधस्संयमोऽन्यः श्यामाऽख्य इति ते पुनः ।
तरणिः शुभपुत्रोऽभूच्चत्वारस्तरणेरपि ॥४४॥
ईशाख्यो दुर्ल्लभश्चैव तृतीयो गौतमाभिधः ।
चतुर्थः शिवरामोऽभूदीशसूनुः शुचिः पुनः ॥४५॥
शुचे र्द्वावङ्गजौ जातौ विष्णुश्चाऽर्ज्जुन नामकः ।
विष्णोः कुन्दोऽङ्गजो जज्ञे षडासन् कुन्दसूनवः ॥४६॥
ब्रह्माख्यः प्रथमो जज्ञे मरुत्वांल्लोमशः पुनः ।
कारुणो धुरसंज्ञोऽन्यो षडेते भ्रातरोऽभवन् ॥४७॥
ब्रह्मपुत्रो ऽभवन्मेधा शैलस्तस्य पुनस्सुतः ।
निरञ्जनः शैलसूनुस्तस्य द्वावास्तुः सुतौ ॥४८॥
पञ्चाननो वासव संज्ञकोऽन्यो पञ्चाननस्याथ निशाकरस्सुतः ।
निशाकरस्यासुरिमेऽङ्गजाताः ख्यातास्समस्ते क्षितिमण्डले त्रयः ॥४९॥
ज्येष्ठो गुणनिधिस्तेषु दिनेशो मध्यमो मतः ।
अन्त्य उर्वी गुणनिधेस्तनूजस्तु क्षपाकरः ॥५०॥
क्षपाकरस्य तनयौ कृष्णाख्यो गालवः परः ।
बभूवतुरुभौ ख्यातौ क्षपाकरयशस्करौ ॥५१॥

निकेतनः कृष्णसुतो बभूव निकेतनात्पञ्च बभूवुरात्मजाः ।
तत्रादिमोऽभूद्बलभद्रनामा पालो द्वितीयो वरुणस्तृतीयः ॥५२॥
तुर्यः सुभावः पुनरेव पञ्चमः शीलाभिधोऽमी कथितास्सगर्भाः ।
देवेशनामा बलभद्रसूनुः देवेशपुत्रास्त्रय एव जाताः ॥५३॥
द्रुमेशनामा मथुराभिधोऽथ सुजानसंज्ञः कथितस्तृतीयः ।
द्रुमेशसूनुः पुरुषोत्तमोऽभूद् दिनेशनामाऽजनि तस्य पुत्रः ॥५४॥

परमेश्वरनामाथो द्वितीयः खञ्जनस्तथा ।
सुधाभिधोऽमी तनया दिनेशस्य प्रकीर्त्तिताः ॥५५॥
परमेश्वरस्य तनयो नाम्ना सुखनिधिस्सुधीः ।
त्रयस्सुखनिधेरासंस्तनया नयकोविदाः ॥५६॥
गुणाकराभिधो व्यासः पुनस्सुमुखसंज्ञकः ।
गुणाकराङ्गजो जज्ञे नाम्ना दण्डधरः पुनः ॥५७॥
केदार कुमुदो नाम्ना सरस्वत्यभिधोऽपरः ।
त्रयस्ते जज्ञिरे श्रेष्ठा अमी दण्डधराङ्गजाः ॥५८॥
केदारतनयो जज्ञे महागुण इतोरितः ।
हरिवंशरामसंज्ञौ महागुणसुतौ मतौ ॥५९॥
द्वारकानाथसंज्ञोऽभूद्धरिवंशाङ्गसम्भवः ।
चत्वारःसूनवस्तस्य बभूवुरिति कोविदाः ॥६०॥
सभापतिर्दुर्गनामा कश्यपो हरिसंज्ञकः ।
सभापतेरथो जज्ञे दीनानाथस्सुतस्सुधीः ॥६१॥
दीनानाथस्य तनयौ ध्रुवश्च करुणाकरः ।
ध्रुवस्य सिद्धस्तनयो सिद्धस्यासन् सुतास्त्रयः ॥६२॥
सुखानन्दः पुनर्लक्ष्मीरुद्यमस्त्रय एव ते ।
हरिकेशस्सुखानन्दः तनूजस्तपसोज्ज्वलः ॥६३॥

सोमदत्तस्सुतो जज्ञे हरिकेशस्य वै सकृत् ।
सोमदत्तसुतो जज्ञे सोमनाथ उदारधीः ॥६४॥
सोमनाथस्य तनयो रघुरासीन्महायशाः ।
रघोरेकादश सुताः बभूवुर्वंशवर्द्धनाः ॥६५॥
दमनो निमिषश्चैकदन्तनामा तथापरः ।
नृसिंहाख्यो मणिर्भूयो दुर्वासाः सुकुतूहलः ॥६६॥
दीर्घायुर्मङ्गलः शेषः शीतांशुरिति कीर्त्तिताः ।
दमनस्य तनूजोभूदिन्द्रस्तस्य तु माधवः ॥६७॥
अश्विनी माधवादासीत् शिवदत्तोऽश्विनीसुतः ।
शिवदत्तस्य तनयो धर्मदत्तः प्रकीर्त्तितः ॥६८॥
धर्मदत्ताङ्गजो जज्ञे शिवशर्माभिधस्सुतः ।
शिवशर्माङ्गजो जातो नित्यानन्द उदारधीः ॥६९॥
नित्यानन्दस्य तनयो बुद्धिनाथ उदीरितः ।
बुद्धिनाथाङ्गजः ख्यातो दयानिधिरकल्मषः ॥७०॥
बलभद्रो नगो नाम्ना दायादौ तौ दयानिधेः ।
माहेश्वरो बभूवाग्रे बलभद्रसुतस्सुधीः ॥७१॥
माहेश्वराङ्गसम्भूता जज्ञिरे बलभञ्जनः ।
दामोदरो महाभागस्त्रय एते प्रकीर्त्तिताः ॥७२॥
चन्द्रावतंसनामाभूद्बलभञ्जनदेहजः ।
तस्य गोपालनामाभूदयोध्यानाथसंज्ञकः ॥७३॥
धुरन्धरस्त्रय इमे पितुरानन्ददास्सदा ।
गोपालस्य मुकुन्दोऽभूच्चत्वारस्तस्य सूनवः ॥७४॥
बभूवुर्विक्रमो ज्येष्ठः श्रीधरोऽन्यस्समः पुनः ।
कान्तान्त्यो विक्रमस्यासीद्धर्षणस्तनयः पुनः ॥७५॥

ऋषिरासीद्धर्षणस्य ऋषेरपि त्रयोङ्गजाः ।
गोपीवल्लभदक्षाख्यौ यज्ञाधीशोऽथ जज्ञिरे ॥७६॥
महारुद्रस्सोमयाजी विश्वेशहरिशङ्कराः ।
अमी त्रयस्तुकथिताः गोपीवल्लभसूनवः ॥७७॥
महारुद्रो दीक्षितस्य तनयौ द्वौ बभूवतुः ।
विद्रुमः परमानन्दो विद्रुमाच्छारदोऽभवत् ॥७८॥
शारदस्य सुकेशोऽभूत्तनयस्तस्य देहजः ।
वेदविद्विदितो भूमौ बभूवामरदीक्षितः ॥७९॥
तस्य वाणस्सुतो जज्ञे योऽग्निहोत्रीरितो भुवि ।
कर्मकाण्डेति निष्णातो विख्यातो वेदबिच्छुचिः ॥८०॥

कल्याणनामाऽजनि वाणसूनुः
तस्याङ्गजातोऽथ सुदेशसंज्ञः ।
सुदेशपुत्रो भुवि गीतकीर्त्तिः
त्रिलोचनो दीक्षित आस्त भूयः ॥८१॥

त्रिलोचनस्तनूजोऽभूदग्निहोत्री पतञ्जलिः ।
पतञ्जलेरग्निहोत्री बभूवाब्जोङ्गजः पुनः ॥८२॥
अब्जपुत्रो जलाधीशो लक्ष्मीकान्तस्तु तत्सुतः ।
लक्ष्मीकान्तस्य तनयो दीक्षितोऽथ गुणाकरः ॥८३॥
गुणाकराङ्गजो जज्ञे विख्यातो भीमदीक्षितः ।
भीमस्य सूनुरभवत् सुखानन्दोऽथ दीक्षितः ॥८४॥
दीक्षितो धर्मदत्तोऽन्यः प्रसादाऽख्यो बभूवतुः ।
सुखानन्दस्य तनयौ विख्यातौ विनयान्वितौ ॥८५॥
अग्निहोत्री भानुदत्तो धर्मदत्ताङ्गजोऽजनि ।
कुशेशस्तनयस्तस्मादग्निहोत्री ह्यजायत ॥८६॥

अग्निहोत्री हरिभुजः कुशेशस्यात्मजोऽभवत् ।
जज्ञे हरिभुजस्सूनुरग्निहोत्री चतुर्भुजः ॥८७॥
पितृसेवकोऽग्निहोत्री चतुर्भुजसुतोऽजनि ।
विकासनामाग्निहोत्री पितृसेवकदेहजः ॥८८॥
विकासतस्तु सन्धानः सुतस्सन्धानवंशकृत् ।
विवस्वाँस्तनयो जज्ञे पुत्र आसीद्विवस्वतः ॥८९॥
नाम्ना भुजबलः श्रीमान् दीक्षितः शिक्षितः श्रुतौ ।
जगदानन्दाग्निहोत्री तस्यासीत्तनयस्सुधीः ॥९०॥
जगदानन्ददायादो जटाशङ्करदीक्षितः ।
बभूव तनयस्तस्य विद्याधरदीक्षितः ॥९१॥
विद्याधरसुतो जज्ञे दीक्षितः पाकशासनः ।
देवेश्वराभिधश्चासीद्दीक्षितः पाकशासनिः ॥९२॥
वेदवेदाङ्गनिपुणः शास्त्रसन्धस्य सेवधीः ।
देवेश्वरस्य तनयो जज्ञे भूपति दीक्षितः ॥९३॥

यस्य द्वारि द्विरदपतयो मानवन्तो महीपाः
चक्रुः स्वैः स्वैः शिरोभिर्नतिततिमभितो दूरतो भूतलस्थाः ।
श्रीमद्विद्वद्वरिष्ठो सकलगुणमयो सर्वशास्त्राधिकारी,
ज्ञानी मानी प्रमाणी शुचिभुवि विदितो सर्वदा कीर्त्तिशाली ॥९४॥
यस्मै श्रीपरिमालभूपतिरदात्स्पर्शम्मणिम्मानयन्
साक्षाद् भूपति दीक्षितोऽजनि जगत् ख्यातो विधातापरः ।
श्रौतस्मार्त्तसुकर्म्मधर्म्मनिरतो विद्वत्सु बद्धादरः ।
कान्त्यागारसदोपनाम कथितो सिद्धाख्यभूपापरः ॥९५॥

---

* भूपति दीक्षितके स्थानका पता राजा परिमालके कारण लगता है । परिमाल महोबेके राजा चंदेल राजपूत थे, जिनसे दिल्लीके महाराज

ख्यातोऽङ्गजो दुर्गपतिर्दीक्षितो भूपतेरभूत् ।
अग्निहोत्री दुर्गपतेस्सत्य आसीत् सुतस्सुधीः ॥९६॥
सत्यात्मजो भाग्यवन्त आसीत्तस्योद्यमस्सुतः ।
बभूवुरुद्यमसुता श्चत्वारश्चारुदर्शनाः ॥९७॥
ज्येष्ठो महामना जज्ञे त्रिवेदी सुमुखः पुनः ।
दुर्बलः शुचिरित्येते सर्वे सत्यरताः स्मृताः ॥९८॥
महामना सूनुरभूत्प्रकाशः प्रकाशपुत्रोऽजनि भूधराऽख्यः ।
तस्याग्निहोत्राभिरतस्य दीक्षायुक्तोऽथ पूर्णस्तनयो बभूव ॥९९॥
गङ्गाधराभिधो जज्ञे दीक्षितः पूर्णनन्दनः ।
गङ्गाधरस्य तनयो बभूव मदनस्सुधीः ॥१००॥
रत्नाकरोऽभूत्तनयो दीक्षितो मदनस्य हि ।
रत्नाकराङ्गजो जज्ञे वेणीदत्तोऽथ दीक्षितः ॥१०१॥
वेणीदत्ताङ्गजो जाना विख्यातो जनिदीक्षितः ।
रणवीरनृपो यस्मै ददौ शासनमादरात् ॥१०२॥

पृथ्वीराज चौहानका युद्ध हुआ था और जिन्हें सन् ११८३ में पृथ्वीराजने पहुज नदीपर सिरसागढ़में हराया था । परिमालका समय सन् ११७५ से ११८० समझना चाहिये । ९५ संख्यक श्लोकसे जान पड़ता है कि भूपति दीक्षितका निवास भी महोबेके आसपास जीजहुत (जेजाभुक्ति) वा बुंदेलखण्डमें कहीं था । परिमालके पास दो महत्त्वकी वस्तुएँ थीं एक हिरनागर घोड़ा और दूसरी पारसमणि । आल्हामें लिखा है कि हिरनागर घोड़ेपर तो परिमालने जगनिक वा जगनायक भाटको आल्हाऊदलको मना लानेके लिये कनौज भेज दिया था और पारस धसाननदीमें फेंक दिया था । पर उक्त श्लोकसे जान पड़ता है कि पारस नदीमें नहीं फेंका था, भूपतिदीक्षितको दे दिया था ।

जानाङ्गजौ द्वौ सुतौ नेमिदेवगदाधरौ ।
आनन्दाम्बुनिधेः प्राज्ञौ जानापुरनिवासिनौ ॥१०३॥
महामनो भ्रातरस्तु सुमुखाद्याः प्रकीर्त्तिताः ।
साम्प्रतं सम्यगालोच्य तेषां वंशान् ब्रवीम्यहम् ॥१०४॥

अथ सुमुख त्रिवेदिवंशमाह ।

त्रिवेदिनः श्रीसुमुखस्य सूनू रामेश्वरस्तस्य बभूव वेणुः ।
पयोधरो वेणुसुतो बभूव वसन्त नामा जनितस्य पुत्रः ॥१०५॥
सन्तान नाम्नो जनि भार्गवोऽथ तस्यात्मजोऽभूज्जगनेश्वराख्यः ।
जज्ञेऽथ पुत्रो जगनेश्वरस्य प्रख्यातकीर्त्ति र्मुरलीधरश्च ॥१०६॥
जानकीनाथसंज्ञोऽभून्मुरलीधरनन्दनः ।
सुवंशस्तनयो जज्ञे जानकीनाथशर्मणः ॥१०७॥
वाणीप्रसादस्तनयः सुवंशस्य सुसम्मतः ।
वाणीप्रसादपुत्रोऽभूञ्छ्रीमान्येते त्रिवेदिनः ॥१०८॥

इत्युपमन्युवंशवल्यां त्रिवेदिवंशवर्णनम् ।

अथ दुर्बलपाठकवंशमाह ।

दुर्बलात्पाठको जज्ञे शिववर्णाभिधस्सुतः ।
बभूव शिववर्णस्य सत्यनामा सुतः शुभः ॥१०९॥
रूपः सत्यात्मजो जज्ञे पावनो रूपनन्दनः ।
बभूव पावनसुतो नाम्ना वंशीधरस्सुधीः ॥११०॥
वंशीधरस्य तनयो हरिरामः प्रकीर्त्तितः ।
हरिरामाङ्गजो जज्ञे दयासिन्धुस्सुतस्सुधीः ॥१११॥
सीतारामो दयासिन्धोरभूत्सूनुस्तदङ्गजः ।
विश्वनाथाभिधो जज्ञे समाधानस्तु तत्सुतः ॥११२॥

समाधानस्य तनयो कमलाख्योऽभवत्पुनः ।
सत्यसिन्धुः कमलजः कथिताः पाठका इमे ॥११३॥
इत्युपमन्युवंशावल्यां पाठकवंशवर्णनम् ।

अथ शुचिद्विवेदिवंशमाह ।

द्विवेदिनः शुचेरासीत्पुत्रो नाम्ना गदाधरः ।
गदाधरस्य तनयो ख्यातो गिरिधरोऽभवत् ॥११४॥
कवि गिरिधरो ह्यासीत्तस्य सूनुस्सुधाकरः ।
सुधाकराङ्गजो जज्ञे जगन्नाथ उदारधीः ॥११५॥
जगन्नाथस्य तनयो देवनाथोऽभवत्पुनः ।
देवनाथस्य पुत्रोऽभूद्दषिनाथस्तदात्मजः ॥११६॥
निश्चलोऽजनि तस्यासीत्पुत्रो मानधरस्सुधीः ।
अयोध्यानाथ नामाभूत् सुतो मानधरस्य हि ॥११७॥
अयोध्यानाथतनयो विहारी नामकोऽभवत् ।
विहारिणस्सुतो जज्ञे मित्रानन्दस्ततोऽभवत् ॥११८॥
प्रभाकर इमे प्रोक्ताः क्षितौ ख्याता द्विवेदिनः ।
संक्षेपतो मया नाम्ना पूर्वलेखानुसारतः ॥११९॥

इत्युपमन्युवंशावल्यां द्विवेदिवंशकथनम् ।

अथ जानात्मज नेमिदेववंशमाह ।

गोपीनाथो नेमिदेवात्मजो यः
तस्याद्याहं वच्मि वंशं विशालम् ।
यस्मिन् जाता वंशजाः कीर्त्तिमन्तो
भूमौ ख्याता याज्ञिका धर्मशीलाः ॥१२०॥

कृतावसथ्यस्य गोपीनाथस्य तनया नव ।
द्विभार्यागर्भसम्भूता बभूवुर्भुवि विश्रुताः ॥१२१॥
नान्हू भट्टू गोशलख्याश्च चतुर्थः कवरस्तथा ।
सहोदरा इमे प्रोक्ताऽपरे पञ्चन्यमातृकाः ॥१२२॥
शङ्कू-कणू-रजऊ-कामदेव-विद्याधराख्या नव सम्युगुक्ताः ।
तेषामहं वंशविभागमत्र यथाश्रुतं वच्मि विशुद्धकर्मणाम् ॥१२३॥
शङ्कूकणू कामदेवस्तथैव नान्हूसंज्ञो नामतोऽमी निरुक्ताः ।
वंशस्तेषां नैव विज्ञात आसीदस्ति ज्ञाता पद्धतिः कामदैवी ॥१२४॥
विद्याधरोऽभिधो नाम्ना गोशलः कवरस्तथा ।
भट्टू संज्ञश्च रजऊ एतेषां विपुलान्वयः ॥१२५॥

अथ रजऊवंशमाह ।

अभूवन् रजऊपुत्रः कुशनू संज्ञकोऽभवत् ।
तस्य द्वौ तनयौ जातौ नाम्ना लोलपराशरौ ॥१२६॥
तत्पुत्रपौत्रजास्सर्वे गङ्गातटविहारिणः ।
ग्रामे जाजमऊ नाम्नि न्यवसन्निति नः श्रुतम् ॥१२७॥

इति रजऊवंशः ।

अथ विद्याधरस्य वंशमाह

विद्याधरस्य नगईप्रभृतीनामुदाहृता ।
ब्रह्मेति पदवी वंशे नृपदत्तेति नः श्रुतम् ॥१२८॥

इति विद्याधरस्यवंशः

अथ कवरस्य वंशमाह

गोपीसुतो यो कवरस्तस्यासीद् घाटमोऽङ्गजः ।
घाटमस्य सुता अष्टौ बभूवुस्ते धरातले ॥१२९॥

अष्टभ्रातृकतया ते ख्यातास्तान् नामतो ब्रुवे ।
सुरेश्वरो जौनसंज्ञः केदाराख्योऽथ कर्म्मणिः ॥१३०॥
लक्ष्मणः भैरवो खर्गो नन्दसंज्ञस्तथाष्टमः ।
केदारस्याथ खर्गस्य कर्मणेश्चान्वयो भुवि ॥१३१॥
सुरेश्वरस्येतरेषां वर्ण्यते वंशसम्भवः ।
सुरेश्वरस्य देवर्षिः ज्येष्ठः पीताम्बरः पुनः ॥१३२॥
हरिहराख्यस्तृतीयः खेमनामा चतुर्थकः ।
पञ्चमो विश्वरूपाख्यो मकरन्दस्तथापरः ॥१३३॥
सुरेश्वरस्य तनयाः षडेते परिकीर्त्तिताः ।
येषां वंशोऽतिविपुलो न शक्यो नामभिः पृथक् ॥१३४॥
वर्णितुन्तेन दिङ्मात्रं प्राधान्येनोच्यते मया ।
वंशो देवऋषेरासीच्चेवराशी समाश्रितः ॥१३५॥
पीताम्बरस्यान्वयोऽपि डोमनाख्यपुरे ऽवसत् ।
डालामऊ हरिहरः पुत्रपौत्रस्थितोऽभवत् ॥१३६॥
खेमान्वयो लखनऊ न्यवसद्विश्वरूपजाः ।
ग्रामे परियराख्ये ते वासं चक्रुः मया श्रुतम् ॥१३७॥
ब्रह्मावर्त्तेऽथ ख्यौराख्ये मकरन्दान्वयोऽवसत् ।
संक्षेपेण मया प्रोक्ताः सुरेश्वरकुलोद्भवाः ॥१३८॥
जौनस्य वंशजा वासं देवदासादयस्सुखम् ।
मलावैसंज्ञके ग्रामे चक्रुस्ते सकलत्रकाः ॥१३९॥
भैरवस्य जयानन्दादयो वंशसमुद्भवाः ।
सांडी नगर्यां चक्रुस्ते स्थानमार्यसुखोचितम् ॥१४०॥
आनन्दस्यात्मजो हर्षस्तत्सुतो हरिचन्द्रकः ।
तत्पुत्रो रघुनाथाख्यो मलावैनगरेऽवसत् ॥१४१॥

देवशर्मा खेमकर्णः खेचरो लक्ष्मणाङ्गजाः ।
त्रयोऽमी वसतिश्चक्रुः सांडोपुर्यां समाहिताः ॥१४२॥
अनपत्यो देवशर्मा बभूव पुनरङ्गजः ।
खेमकर्णस्य बुद्धीति नामाभूदिति नः श्रुतम् ॥१४३॥
नारायणाभिधो ज्येष्ठो जयरामस्तथा परः ।
तुला संज्ञस्तृतीयोऽभूद्बुद्धीपुत्रा इमे त्रयः ॥१४४॥
खेचरस्य त्रयः पुत्रा बभूवुस्तेषु चाग्रिमः ।
चक्रपाणि र्द्वितीयस्तु मार्कण्डेयाभिधः पुनः ॥१४५॥
पुखईनामको ज्ञेयश्चक्रपाणिरुभौ सुतौ ।
आदिशर्मा त्रिलोकाख्यौ साधुकृत्यौ बभूवतुः ॥१४६॥
मार्कण्डेयस्य जज्ञाते सूर्यहेमाभिधौ सुतौ ।
पुखईसंज्ञकस्यासीद्दैवज्ञः केशवस्सुतः ॥१४७॥
तदात्मजो नरहरिः प्रमुखा भुवि जज्ञिरे ।
विद्वान् सकलशोभाढ्या धर्म्मकर्म्मपरायणाः ॥१४८॥

इत्युपमन्युवंशावल्यां कवरवंशः ।

अथ भट्टवंशवर्णनम्

गोपीसुतो भट्टनामा योऽभूत्तस्यान्वयोऽधुना ।
कथ्यते यस्य तनयो जज्ञे नाम्ना दिवाकरः ॥१४९॥
दिवाकरस्य तनयो रविदासाभिधः पुनः ।
अर्चितो होरिलः कीशः कनीयाञ्जनकाभिधः ॥१५०॥
पञ्चैते भ्रातरः प्रोक्ता दिवाकरशरीरजाः ।
रविदासात्मजो जज्ञे जगन्नाथो यशोनिधिः ॥१५१॥
वाजपेयाध्वरे यस्य गङ्गा स्वयमुपस्थिता ।
बभूवुस्तनयास्तस्य हरिनारायणादयः ॥१५२॥

हरिनारायणाज्जातो भवकेशो द्विभार्यकः ।
तस्याष्टौ तनया जाताः शिवानन्दादयः शुभाः ॥१५३॥
कीशस्य पुत्रो मधुसूदनोऽभूत् तज्जातका रत्नपुरे समाश्रिताः ।
तथार्चितस्यापि सुतास्समाश्रिता अध्वर्युपुर्यामपि रत्नपुर्याम् ॥१५४॥
होरिल्लस्य सुतौ जातौ लीलदामोदराभिधौ ।
प्रख्यातौ भूतले वंशकीर्त्तिवृद्धिविधायकौ ॥१५५॥
लीलस्य चूड़ामणिरङ्गजोऽभूत् चूड़ामणेस्सूनुरभूच्च रोपणः ।
दामोदरस्यापि सुतोऽथ जज्ञे त्रयो रमेशो जनकस्य सूनुः ॥१५६॥
भवानीदत्तनामाऽभूच्छङ्करोऽस्याभवत्पुनः ।
हंसरामाभिधः पुत्रः शङ्करस्य सुसम्मतः ॥१५७॥
ज्येष्ठपत्न्यां हंसरामो द्वौ पुत्रावुदपादयत् ।
नाम्ना मोहनमेकन्तु द्वितीयमखिलेश्वरम् ॥१५८॥
कनिष्ठपत्न्यामुपजायन्त परमकृष्णमहात्मनाम् ।
एषां त्रयाणां सन्तानो भुवि वृद्धिमगाद्भृशम् ॥१५९॥

इति भट्टवंशः

अथ गोशलवंश वर्णनम्

सूचीकटाहन्यायेन मयादौ वंशनिर्णयः ।
कृतो गोपी तनूजानामष्टानां नामतः पृथक् ॥१६०॥
महात्मा गोशलो गोपीतनयो नवमो गणैः ।
तस्याधुनोच्यते वंशः प्रख्यातो भूतले महान् ॥१६१॥
यज्ञदत्त इति ब्रह्मदत्तको देवदत्त इति जज्ञिरे त्रयः ।
गोशलस्य तनया गुणान्विताः पावका इव पवित्रतेजसः ॥१६२
यज्ञदत्तो जगज्जेता विख्यातो दीक्षितो भुवि ।
संसारासारतां ज्ञात्वा तुर्यमाश्रममग्रहीत् ॥१६३॥

अनुभूतिस्वरूपाख्या यस्मै संन्यासिनो ददुः ।
तदङ्गजौ महाशर्मविष्णुसंज्ञौ बभूवतुः ॥१६४॥
वाजपेयमखलब्धगौरवालंकृताबलमुभौ विरेजतुः ।
यज्ञदत्तसुकृताब्धिसम्भवौ भूतलाभरणसन्मणी इव ॥१६५॥

अथ वाजपेयमखलब्धप्रतिष्ठमहाशर्मवंशमाह ।

बाजपेयिमहाशर्मतनया जज्ञिरे त्रयः ।
जयशर्महरिब्रह्मागदाधर इतोरिताः ॥१६६॥
हरिब्रह्माऽनपत्योऽभूज्जयशर्माङ्गजो जनि ।
देवरामो द्विजश्रेष्ठस्तस्य वंशोऽथ कथ्यते ॥१६७॥

अथ देवरामस्य

देवरामस्य तनयो नाम्ना कुलमणिः कृती ।
बभूवाधिकधर्मिष्ठः सोमयाजी द्विजाग्रणीः ॥१६८॥
बभूवुरस्य चत्वारस्सूनवो भुविविश्रुताः ।
काशीरामो मणीरामो गोपीनाथाभिधोपरः ॥१६९॥
मथुरापतिरित्येते सर्वे वंशविवर्द्धनाः ।
काशीरामस्य तनयाः षडासन्निति विश्रुताः ॥१७०॥
नाम्ना प्राणमणिर्ज्येष्ठस्ततश्चूडामणिः पुनः ।
रघुनन्दनसंज्ञोऽथ यदुनन्दननामकः ॥१७१॥
गङ्गामणिर्लक्ष्मणाख्यः कनिष्ठ इति कीर्त्तिताः ।
ज्येष्ठप्राणमणेर्सूनुरुपेन्द्रहरिनामकः ॥१७२॥
मध्यमो भवदत्तोऽभूदादिनाथो लघुः पुनः ।
चूडामणिर्ज्येष्ठपुत्रो जज्ञे नाम्ना प्रजापतिः ॥१७३॥
दामोदरो मध्यमोऽभूत्कनिष्ठो मधुसूदनः ।
रघुनन्दनदायादा जाता गोवर्द्धनादयः ॥१७४॥

यदुनन्दनसंजाता एकनाथादयस्सुताः ।
गङ्गामणेरङ्गजा ये जाता वीरेश्वरादयः ॥१७५॥
लक्ष्मणस्य सुता जाता न ज्ञाता नामभिर्मया ।
काशोरामान्वयो भूयान्कथं वर्णयितुं क्षमः ॥१७६॥

अथ मणीरामस्य

मनोरथाख्यो बलभद्रनामा तथा परो लालमणिस्तृतीयः ।
इमे समानोदरजा बभूवुर्ख्याता मणोरामशरीरसम्भवाः ॥१७७॥
कनिष्ठपत्न्यामपरौ द्वौ मणिरामसम्भवौ ।
जज्ञाते भुवि विख्यातौ मित्रानन्द महामुनिः ॥१७८॥
पञ्चपुत्रान्वयो भूमौ देशे देशे व्यवस्थितः ।
विपुलो नामभिः ख्यातमशक्यो वर्ण्यते कथम् ॥१७९॥

इति मणिरामजाः

अथ गोपनाथमथुरापत्ययोः

गोपीनाथाङ्गजो जज्ञे ज्येष्ठः पीताम्बराभिधः ।
गौरीनाथो मध्यमोऽभूद्भानुदत्तस्ततो लघुः ॥१८०॥
पुत्रपौत्रादयस्तेषां न ज्ञाता नामभिर्मया ।
मथुरानाथतनयाश्च चत्वारश्चारुदर्शनाः ॥१८१॥
लक्ष्मीनाथः कृष्णसंज्ञो मणिकृष्णाभिधः परः ।
विश्वम्भराख्य इत्येते बभूवुर्वंशवर्द्धनाः ॥१८२॥

अथ गदाधरस्य

तिर्मलगङ्गारामौ गदाधरस्यात्मजौ ख्यातौ ।
तिर्मलतनयो नाम्ना ज्येष्ठो भागीरथो जातः ॥१८३॥
सोमेश्वरस्सुतनयो लघुस्तिर्मलसम्भवः ।
गङ्गारामस्य तनयो कृपारामो भवत्ततः ॥१८४॥

कृपारामस्य तनयाः खटोलाग्रामवासिनः ।
बभूवुरपरे वासं चक्रुः साहिपुरेऽपि च ॥१८५॥

इत्युपमन्युवंशावल्यां महाशर्मवंशकथनम् ।

अथ स्वराट् सम्राडग्निचित्स्थपति वाजपेयि-विष्णुशर्मवंशवर्णनम् ।

मीमांसागमपारगोऽतिनिपुणः पातञ्जले प्रौढधीः ।
तर्के शेषगवीविचारचतुरः सांख्ये तु सिद्धेश्वरः ॥१८६॥
श्रौतस्मार्त्तविधौ विधिः प्रतिनिधिः वेदान्तवेत्ता क्षितौ ।
जज्ञे यज्ञसमर्पितार्थनिचयः श्रीविष्णुशर्माभिधः ॥१८७॥
स्वराट् सम्राडपि सदा ब्रह्मण्यो विनयान्वितः ।
वदान्योप्यनहङ्कारः साक्षाद्धर्म्मः शरीरभाक् ॥१८८॥
वाजपेयि विष्णुशर्मा विप्राणाम्परिवेषणे ।
स्रस्तेंशुके चतुर्बाहुर्बभूवेयं पृथाभुवि ॥१८९॥
षडासन्सूनवस्तस्य वश्या विगतकल्मषाः ।
ज्येष्ठो नाम्ना हरिहरः श्रेष्ठः सर्वगुणैर्युतः ॥१९०॥
षडङ्गसहिता वेदाः यस्य जिह्वाग्रवर्त्तिनः ।
बभूवोह्मेति परं नामासीद् भुवि विश्रुतः ॥१९१॥
लक्ष्मो संज्ञस्तदनुजो वदान्यो विगतस्पृहः ।
यज्ञेन यज्ञनिपुणो बलभद्रस्ततोऽभवत् ॥१९२॥
शिवशर्मा देवशर्मा हरिकेशवसंज्ञकः ।
नाम्ना निरुक्तास्ते सर्वे विष्णुशर्माङ्गसम्भवाः ॥१९३॥

अथ हरिहरस्य वंशमाह

छङ्गे गङ्गे संज्ञकौ द्वौ समानोदरसम्भवौ ।
जज्ञातेऽतोवसुधियौ पुत्रौ हरिहरस्य तु ॥१९४॥

गङ्गे नामाऽनपत्योऽभूच्छङ्गेसंज्ञसुतावुभौ ।
बभूवतुस्तयोर्ज्येष्ठः श्रीमान् प्रीतिकरोऽनुजः ॥१९५॥
रामभद्र इति प्रोक्तः द्वयोर्वंशोऽधुनोच्यते ।
प्रपौत्रेऽतीव वात्सल्यं चकार प्रपितामहः ॥१९६॥
विष्णुशर्मा प्रीतिकरो तेनाख्यातो धरातले ।
बभूव यस्य महतो प्रतिष्ठाद्यापि वर्त्तते ॥१९७॥
दिशि दिशि गीतगुणः पवित्रकीर्त्तिः पुरपुरभूसुरसङ्घसेवितांघ्रिः ।
नरनरमान्यतमो महत्तमोऽभूत् प्रीतिकरः कृत सोमपान शुद्धः ॥१९८॥

अथ प्रीतिकरवंशः

रामचन्द्र इति ज्येष्ठो बुद्धिशर्मा ततोऽनुजः ।
वेणीदत्तो गणपतिः नाम्ना नरहरिः पुनः ॥१९९॥
पीताम्बर इमे सर्वे षट् प्रीतिकरसूनवः ।
समानोदरसम्भूता बभूवुर्भुवि विश्रुताः ॥२००॥

अथ रामचन्द्रस्य

रामचन्द्रस्य षट्पुत्राः बभूवुस्तात्त्वदास्य हि ।
धर्म्मनारायणो रामनारायण इतीरितः ॥२०१॥
हरिनारायणाख्योऽन्यो घूरेसंज्ञस्तथा पुनः ।
ऋषणो विश्वनाथश्च षडेते परिकीर्त्तिताः ॥२०२॥
धर्म्मनारायणसुतः छीतो सूनुस्तस्य शुभङ्करः ।
तस्य तु समुत्पन्नौ द्वौ सुतौ पितृसम्मतौ ॥२०३॥
नाम्ना चूडामणिर्ज्येष्ठो बभूवास्यैव सन्ततिः ।
जातो गुलालनामान्यो शुभङ्करसुतो लघुः ॥२०४॥
सद्गुणो नयसम्पन्नः गम्भीरो बुधविश्रुतः ।
बभूव तस्य तनयौ द्वौ जज्ञाते सहोदरौ ॥२०५॥

राधाकृष्णदयाकृष्णसंज्ञौ सम्यक् मयोदितौ ।
दयाकृष्णस्य दायादा वासुदेवादयोऽधुना ॥२०६॥
चत्वारस्सन्ति गोविन्द-गुमानो-संज्ञकस्तथा ।
आनन्दसंज्ञक इमे दयाकृष्णशरीरजाः ॥२०७॥
वर्त्तन्ते कथितो वंशः संक्षेपेण मयाधुना ।
रामचन्द्रतनूजस्य धर्म्मनारायणस्य हि ।
ज्येष्ठस्य नेतरेषाञ्च रामचन्द्रभवो मया ॥२०८॥
इति रामचन्द्रस्य ।

अथ बुद्धिशर्मसोमयाजिवंशमाह ।

सूनुः प्रीतिकरस्याथ बुद्धिशर्म्मा हि उच्यते ।
वंशोस्यास्तीह महती प्रतिष्ठा भूमिमण्डले ॥२०९॥
बुद्धिशर्मा सोमयाजी शास्त्रज्ञो विश्रुतो भुवि ।
तस्य लालोलक्षणश्च ज्येष्ठपत्न्यां बभूवतुः ॥२१०॥
सुतौ सर्वगुणोपेतौ ज्ञातौ ज्ञेयचतुष्टयोः ।
कनिष्ठपत्न्यां चतुराश्चत्वारो जज्ञिरे सुताः ॥२११॥
भीखूनामा लोकमणिस्तृतीयः शङ्करः पुनः ।
मणीराम इमे सर्वे समानोदरसम्भवाः ॥२१२॥

अथ भीखूवंशः

नन्दरामोऽभिधो ज्येष्ठो लघुर्वंशीधराभिधः ।
इमौ द्वौ तनयौ तस्य भीखू नाम्नो बभूवतुः ॥२१३॥
नन्दरामाङ्गजो जज्ञे शिवनाथस्तदात्मजाः ।
चत्वारो जज्ञिरे तेषां नामान्यथ वदाम्यहम् ॥२१४॥
ज्येष्ठो नाम्नस्सर्वसुखस्ततो मनसुखाभिधः ।
विश्वनाथो समाधानो मयैते परिकीर्त्तिताः ॥२१५॥

नेवाजीलालनामाभूत्पुत्रस्सर्वसुखस्य हि ।
ज्येष्ठपत्न्यां न तस्यास्ति तनयः कोऽपि साम्प्रतम् ॥२१६॥
शिवप्रसादनामान्यः सूनुः सर्वसुखादिह ।
जातो लघुस्त्रीजठरादादिनाथस्तदङ्गजः ॥२१७॥
वर्त्तते साम्प्रतं तस्य सूनुः शङ्करसंज्ञकः ।
मनसुखोऽनपत्योऽभूद् भ्राता सर्वसुखस्य हि ॥२१८॥
विश्वनाथाङ्गजो ज्येष्ठपत्न्यां सङ्गमसंज्ञकः ।
वभूव लघुपत्न्यान्तु रामकृष्णाभिधः सुतः ॥२१९॥
पुत्रपौत्रास्सङ्गमस्य वसन्ति सकलत्रकाः ।
भगवन्ताख्य नगरे रामकृष्णसुतस्तु यः ॥२२०॥
द्वारकानाथ नामासौ वर्त्तते स्वगृहे सुखम् ।
सन्ततेस्सहितो यस्य सुहृदो बन्धुवत्सलः ॥२२१॥
शीतलाख्यो रामदत्तो राधाकृष्णस्तथा पुनः ।
प्रयागसंज्ञको नाम्ना रामेश्वर इतीरिताः ॥२२२॥
नाम्ना साहेबलालोऽभूत् षट् समाधानसूनवः ।
धर्म्मकर्म्मप्रयुक्तोभूत् सुशीलो विनयान्वितः ॥२२३॥
त्रयाणान्तेषु सन्तानो न बभुवुः परे त्रयः ।
सन्तानसहिताहष्टानामतस्तान्वदाम्यहम् ॥२२४॥
सूनवस्त्रय एवासन् सुधीशीतलशर्मणः ।
श्यामलाल इति ज्येष्ठो मनसारामसंज्ञकः ॥२२५॥
मध्यमः पुनरन्त्यो यः स्थानेश्वर इतीरितः ।
त्रयाणामप्यहं वच्मि सन्तति नामतोऽधुना ॥२२६॥
जवाहिरलालनामाभूत् मुन्नालालाभिधः परः ।
मानूलालस्त्रय इमे श्यामलालस्य सूनवः ॥२२७॥

सहोदरास्सन्त्यधुना मुन्नालालो य ईरितः ।
कालिकाख्य सुतेनासौ सहितस्सुखमश्नुते ॥२२८॥
मानूलालस्तृतीयोऽपि श्यामलाल सुतस्स तु ।
नाम्ना हरसहायेन पुत्रेण सह वर्त्तते ॥२२९॥
मनसारामनामो यो मध्यमः शीतलाङ्गजः ।
पुत्रेण मङ्गलाख्येन पौत्रेणापि समन्वितः ॥२३०॥
तिष्ठत्यतः परं योऽसौ कनिष्ठः शीतलाङ्गजः ।
नाम्ना थानेश्वरस्तस्य चत्वारस्सन्ति सूनवः ॥२३१॥
निद्धोनामा ज्येष्ठपत्नीगर्भजातस्तु तत्सुतः ।
ज्येष्ठस्तस्यास्ति तनयो गङ्गाविष्णुरितीरितः ॥२३२॥
सिद्धी पुनर्गणेशाख्यो नाम्नानन्दीति ते त्रयः ।
थानेश्वराङ्गसम्भूताः लघुस्त्रीगर्भसम्भवाः ॥२३३॥
वर्त्तन्ते ससुखं पित्रा ललिताः पितृसम्मताः ।
सम्यगित्थम्मयाख्याताः शीतलान्वयसम्भवाः ॥२३४॥
मान्धाता ज्येष्ठपत्न्यां राधेकृष्णशरीरजाः ।
ततो लघुस्त्रीसम्भूतः देवोनामेह वर्त्तते ॥२३५॥
ढाकेश्वरोऽस्ति तनयः साहेबलालशर्मणः ।
समाधानप्रभूतानां त्रयाणामीरितो मया ॥२३६॥

इति नन्दरामस्य ।

वंशीधरस्याथ गदाधराख्यः पुत्रोऽथ तस्माज्जनि सूनुरेकः ।
वेणीप्रसादस्तनयो बभूव तस्याथ चत्वार इमे सगर्भाः ॥२३७॥
देवदत्तो माधवाख्यो मणीरामाभिधः पुनः ।
कृष्णदत्तो मया सर्वे नाम्ना सम्यक् प्रकीर्त्तिताः ॥२३८॥

देवदत्ताङ्गजो नाम्ना वागीश्वर इतीरितः ।
वागीश्वरस्य तनयो बेचूलालोऽत्र वर्त्तते ॥२३९॥
इति भीखूवंशः ।

अथ शङ्करवंशमाह ।

अन्वयो न लोकमणेर्वर्त्तते साम्प्रतम्भुवि ।
वंशोऽधुना शङ्करस्य सद्वृत्तस्य मयोच्यते ॥२४०॥
टीकापतिः शुद्धमतिः चूडामणिरकल्मषः ।
देवीदत्त इमे जातास्त्रयः शङ्करसूनवः ॥२४१॥

अथ टीकापतिवंशः ।

दीनानाथ इति ज्येष्ठो तेजनाथस्तथा पुनः ।
जीवलालस्त्रय इमे टीकापत्यङ्गसम्भवाः ॥२४२॥
दीनानाथस्य तनयौ ज्येष्ठपत्न्यां बभूवतुः ।
छविलालाभिधः पूर्वं इच्छालालाभिधः परः ॥२४३॥
कनिष्ठपत्न्यामपरो दीनानाथाङ्गसम्भवः ।
मुखलालाभिधस्सूनुरित्येते भ्रातरस्त्रयः ॥२४४॥
इच्छालालोऽनपत्योऽभूच्छविलालसुतास्त्रयः ।
ज्येष्ठः खगेश्वरो नाम्ना तुलारामोऽनुजः पुनः ॥२४५॥
सहोदराविमावन्यो जगन्नाथाभिधोऽनुजः ।
त्रय एते समाख्याता छविलालाङ्गसम्भवाः ॥२४६॥
नामानि क्रमतो वच्मि खगेश्वरभवानहम् ।
ज्येष्ठ ईश्वरनामाख्यो ज्येष्ठपत्नीसमुद्भवः ॥२४७॥
महादेवेन पुत्रेण सह सम्प्रति वर्त्तते ।
कनिष्ठपत्न्यां संजातौ मथुराख्य सदासुखौ ॥२४८॥

खगेश्वरस्य कथितास्त्रय एते सुता मया ।
युवैव मृतिमापन्नः तुलारामो ह्यपुत्रकः ॥२४९॥
विनयैर्बहुभिर्युक्तो जगन्नाथोऽस्ति साम्प्रतम् ।
दीनानाथतनूजस्य कनिष्ठस्य सुतान्ब्रुवे ॥२५०॥
शिवचरणः शिवशङ्करश्च सूनू भवतोऽमू सुखलालदेहजातौ ।
शिवचरणस्य शरीरसम्भवास्तु त्रय इह सन्ति समानगर्भजाताः॥२५१॥
तेजनाथस्य तनयो वैद्यनाथोऽस्ति साम्प्रतम् ।
सागरेण स्वपौत्रेण माखनाख्य सुतेन च ॥२५२॥
स एव सागरो येन नोदितेन मया कृता ।
वंशावली निर्मलेयं पद्यैरुक्ता यथाक्रमम् ॥२५३॥
जीवलालस्य तनयो ज्येष्ठपत्न्यामजायत ।
जयसुखः पुनस्तस्य पत्न्यां जातास्सुतास्त्रयः ॥२५४॥
जयसुखस्य सुतौ द्वौ वर्त्तेते साम्प्रतं सुखम् ।
कनौजोलाल नामैको युगराजाभिधः परः ॥२५५॥
कनिष्ठो जीवलालस्य चिरञ्जीवाभिधस्सुतः ।
वर्त्तते सोऽपि पुत्रेण पौत्रेण सहितोऽधुना ॥२५६॥
कनिष्ठपत्नीसम्भूतो जीवलालाङ्गजो युवा ।
परमानन्दो मृतिमगान्निजानन्दस्तथैव च ॥२५७॥
सम्यक् प्रकीर्तितो वंशो मया टीकापतेरथ ।
चूडामणेरहं वंशं कथयामि यथाक्रमम् ॥२५८॥

इति टीकापतेः ।

अथ चूडामणिवंशकथनम् ।

चूडामणेस्सुतनयो विद्वान् ज्येष्ठो गुणान्वितः ।
सुखलालाभिधो जज्ञे तस्यासंस्तनया इमे ॥२५९॥

शेषाशेषगवीविचारचतुरो विख्यातकीर्त्तिः क्षितौ ।
ज्येष्ठो लालमणिर्बभूव तनुजो विद्वान्विधिज्ञाग्रणीः ॥
नाम्ना मोहनलाल इत्यथ कनीयांस्तस्य प्रेमास्पदः ।
काशीनाथ इतोरितस्त्रय इमे जाताभिधा भ्रातरः ॥२६०॥

अथ लालमणिवंश

क्रियाकलापकुशलः प्रेमनाथो द्विजाग्रणीः ।
हीरानन्दोऽथ मतिमान्महानन्दः प्रसन्नधीः ॥२६१॥
सुता इमे लालमणेर्मया नाम्ना प्रकीर्त्तिताः ।
प्रेमनाथाङ्गजो ज्येष्ठो नाम्ना भीष्म इतीरितः ॥२६२॥
ततो गोपालनामान्यो बद्रीनाथ उदाहृतः ।
देवीप्रसादनामैते चत्वारस्सन्ति सोदराः ॥२६३॥
गोपालसूनू युगुलो गङ्गाख्यो स्तौऽधुना तथा ।
बद्रीनाथाङ्गजोऽयोध्यानामासौ बालकोऽधुना ॥२६४॥
नाम्ना राखनलालाख्यो ज्येष्ठस्तदनुजः पुनः ।
ढाकनाख्य इमौ द्वौ तु हीरानन्दाङ्गसम्भवौ ॥२६५॥
वर्त्तेते सोदरावास्ते सूनू राखनसम्भवः ।
वासुदेवाभिधः पञ्च महानन्दस्य सूनवः ॥२६६॥
सन्ति श्रीकृष्ण नामैको हरिकृष्णः पुनस्तथा ।
दुर्गाप्रसादनामाथो यागेश्वर उदाहृतः ॥२६७॥
महेशः पञ्चम इमे महानन्दसमुद्भवाः ।
कथिता भ्रातरस्सर्वे समानोदरसम्भवाः ॥२६८॥

अथ मोहनलालस्य ।

त्रयो मोहनलालस्य तनयास्तेषु साम्प्रतम् ।
वर्त्तेते द्वौ सदानन्दब्रह्मानन्दौ सहोदरौ ॥२६९॥

शिवानन्दो ज्येष्ठपत्न्यां ज्येष्ठो मोहनलालजः ।
युवैव मृतिमापन्नः पुत्रस्तस्यास्ति जानकी ॥२७०॥
ब्रह्मानन्द ज्येष्ठपत्न्यां रामचन्द्र उदाहृतः ।
कनिष्ठपत्नीसम्भूतास्त्रयः पुत्रास्तु साम्प्रतम् ॥२७१॥
केवलो प्रथमो जज्ञे केदारश्च द्वितीयकः ।
मुकुन्दश्च तृतीयोऽभूत् त्रय एते मयोदिताः ॥२७२॥

अथ काशीनाथस्य ।

काशीनाथाङ्गजो नाम्ना परमकृष्ण उदाहृतः ।
पुत्रेण विष्णुदत्तेन ससुखं वर्त्तते क्षितौ ॥२७३॥
द्वितीयः केशवोरायस्तस्यास्ति तनयस्सुधीः ।
हरिनाथाभिधो दक्षश्चिरञ्जीवीति तत्सुतः ॥२७४॥
घनश्यामस्तृतीयो यो काशीनाथाङ्गसम्भवः ।
सन्ति त्रयोऽस्य तनयास्तेषां नामान्यहं ब्रुवे ॥२७५॥
गोपीनाथो पुनर्ज्ञेयो बिहारीलाल मध्यमो ।
गोकर्णाख्यस्तृतीयोऽभूच्चिरञ्जीवि सुतुष्यति ॥२७६॥

अथ हरिलाल-हरिगोविन्दौ ।

मुखलालश्च तनुजौ चूडामण्यङ्गसम्भवः ।
जज्ञाते द्वौ हरीलालहरिगोविन्दसंज्ञकौ ॥२७७॥
हरीलालसुतो ज्येष्ठो मोतीलालाभिधोऽभवत् ।
कनिष्ठो वेणिलालोऽभूच्चौ द्वौ कालेन संस्थितौ ॥२७८॥
पुत्रपौत्रावपि तयोर्वर्तते साम्प्रतं नहि ।
हरिगोविन्दतनयः फेकूलाल इतीरितः ॥२७९॥
ज्येष्ठस्तस्यास्ति तनयो बुद्धिलालस्तु तत्सुतौ ।
वर्त्तेते मथुरानाथ-सुखानन्द-समाख्यकौ ॥२८०॥

सुखानन्दस्य तनयो जुड़ावन इतोरितः ।
फेरूलालाङ्गजो गङ्गाधरो भूयो लघुः पुनः ॥२८१॥
अपुत्र एव स मृतो बुद्धीलालस्तु वर्त्तते ।
सम्यक् चूडामणेर्वंशः कीर्त्तिता नामभिर्मया ॥२८२॥

इति शङ्करवंशवर्णनम् ।

अथ मणीरामस्य वंशमाह ।

बुद्धिशर्माङ्गजो नाम्ना मणीरामो मयोदितः ।
तनयौ तस्य जज्ञाते दिवाकरबहोरणौ ॥२८३॥
सुक्खानाम्ना प्रसिद्धोऽभूद्भूमिभागे दिवाकरः ।
तस्य पुत्रो हेमनाथो ज्येष्ठोभूदग्रजः पुनः ॥२८४॥
कनिष्ठो यदुनाथाख्यो बभूवास्य सुतान् ब्रुवे ।
दुर्गादत्त इति ज्येष्ठस्ततः केशवरामकः ॥२८५॥
द्वितीयः पुनरन्त्योऽपि नाम्ना गोकुलनाथकः ।
ततो नन्दकिशोराख्यो इत्येते कथिता मया ॥२८६॥
चतुर्ष्वेतेषु सन्तानो द्वयोरस्ति द्वयोर्नहि ।
विद्यते विद्यमाने तु वच्मि नाम्नाऽधुना तयोः ॥२८७॥
केशवरामाङ्गजातो बसावनसमाख्यया ।
कथितो वर्त्तते तस्य सन्ति पञ्चाङ्गसम्भवाः ॥२८८॥
द्वितीयोप्यस्ति तत्पुत्रः केशोरामशरीरजः ।
अन्यस्त्रीगर्भसम्भूतः इटौंजे वसतेऽधुना ॥२८९॥

अथ नन्दकिशोरस्य ।

नाम्ना नन्दकिशोराख्यो यदुनाथस्य यः सुतः ।
कनिष्ठस्तस्य सञ्जातास्त्रयः पुत्रास्सहोदराः ॥२९०॥

ज्येष्ठः सुन्दरनामास्ति सहायी नामकोऽनुजः ।
ततः श्रीकृष्णनामान्यो त्रय एते मयोदिताः ॥२९१॥
नन्दकिशोरस्य पुत्रयोर्वंशरिति कथ्यते ।
द्वयोर्निवासस्त्यधुना डौंड़ियाखेर नामके ग्रामे ॥२९२॥

अथ बहोरणस्य

बहोरणस्य तनयो हरिजूसंज्ञकोऽभवत् ।
ज्येष्ठो ज्येष्ठाङ्गनागर्भाज्जातास्तस्य सुतास्त्रयः ॥२९३॥
बभूवुर्नामतो वच्मिताननुक्रमतोऽधुना ।
परमेश्वरस्ततो वृद्धी ततो धीरेश्वरादयः ॥२९४॥
परमेश्वरस्य पुत्रोऽभूज्ज्येष्ठागर्भसम्भवः ।
गङ्गादीन इति ज्येष्ठो बभूवास्यानुजः पुनः ॥२९५॥
वंशीनामा कनिष्ठायां पत्न्यां जातौ सुतौ सुद्वौ ।
गङ्गादीनस्य सञ्जातौ समानोदरसम्भवौ ॥२९६॥
रख्यासूर्यमणिर्नाम्ना तयो रख्या मृतो युवा ।
वर्त्तते सूर्यमणिकः पुत्राभ्यां सहितोऽधुना ॥२९७॥
परमेश्वरजो वंशी युवैव निधनं गतः ।
दोदेनामा सुतस्तस्य वर्त्तते साम्प्रतं भुवि ॥२९८॥

इति मणीरामवंशकथनम् ।

अथ रामभद्रस्यवंशकथनम् ।

छंगेसुतो यो लघु ईरितो मया श्रीरामभद्रोस्य बभूवुरङ्गजाः ।
चत्वारः पुत्राः कथयामि सांप्रतं नामानि तेषां च पृथक् पृथक् पुनः २९९
बालकृष्णोऽथ कमलोनयनः परिकीर्त्तितः ।
हेमनाथो लक्ष्मणाख्यश्च चत्वारः सोदरा इमे ॥३००॥

बालकृष्णतनयो बुधकृष्णः सम्बभूव पुनरस्य तनूजौ ।
सन्तसंज्ञक वसन्तसंज्ञकौ बुद्धिवैभवयुतौ बभूवतुः ॥३०१॥
सन्तस्य सूनू द्वौ जातौ ज्येष्ठस्सिंहमणिस्तयोः ।
भोलानाथकनिष्ठो यः सोऽनपत्योऽभवद् भुवि ॥३०२॥
कालिदासाभिधो वेणीप्रसाद इति द्वौ सुतौ ।
बभूवतुः सिंहमणेः कालिदासस्य द्वौ सुतौ ॥३०३॥
गुलालनामा मुरलीधराभिधो नाम्ना मयैतो कथितौ बभूवतुः ।
पुत्रो न जातो मुरलीधरस्य गुलालनामोऽस्ति सुतस्तु साम्प्रतम् ॥३०४॥
वेणीप्रसादतनयो वर्त्तते रीतियोगवत् ।
तस्यास्ति तनयो नाम्ना तुलसी स्वगृहेऽधुना ॥३०५॥
बसन्तनामा बुधकृष्णसूनुस्तस्य त्रयोऽमी तनया बभूवुः ।
रामोऽभिधानः परमेश्वरस्तथा श्रीकृष्ण नामेति मया निरुक्ताः ॥३०६॥
रामस्य जज्ञिरे पुत्रास्त्रयोऽमी तान् ब्रवीम्यहम् ।
शीतलाख्यस्तथा राधेकृष्णः प्रेमाभिधः पुनः ॥३०७॥
शीतलस्य तु द्वौ पुत्रौ ज्येष्ठपत्नीसमुद्भवौ ।
मेड़ेलाल-सुखानाख्यौ लघुपत्न्यान्तु द्वौ सुतौ ॥३०८॥
वेणीदीन-कुञ्जमणिरित्येते शीतलाङ्गजाः ।
राधेनामा रामपुत्रोऽनपत्यस्समभूदथ ॥३०९॥
प्रेमसंज्ञस्तनयो जयकृष्णाभिधोऽग्रजः ।
कनिष्ठ ऋषिनाथाख्यः सम्बभूव सुशीलवान् ॥३१०॥
जयकृष्णोऽनपत्योऽभूदृषिनाथाङ्गसम्भवः ।
नाम्ना हुलासस्तत्पुत्रपौत्रास्त्यक्त्वा निजालयम् ॥३११॥
शाहाबादाख्यनगरे सन्तीति श्रूयतेऽधुना ।
बभूवेश्वरनाथाख्यः परमेश्वरसंभवः ॥३१२॥

फेरूनामा सुतस्य बभूवास्य तु द्वौ सुतौ ।
रेवतीरामनामैकश्छोटकूसंज्ञकः परः ॥३१३॥
रेवतीरामोऽनपत्यो मृतिमाप युवैव तु ।
मुहम्मदपुरे वासं छोटकश्चक्र आत्मजः ॥३१४॥
तस्य पुत्रोऽपि तत्रैव श्रूयतेऽस्ति पितुर्गृहे ।
वसन्तस्य सुतो योऽभूच्छ्रीकृष्णस्तस्य सूनवः ॥३१५॥
पञ्चासन्नामतस्तेषां वदामि क्रमपूर्वकम् ।
ज्येष्ठः कृष्णकुमाराख्यो रामकृष्णाभिधः पुनः ॥३१६॥
शालग्रामो दयाराम इच्छाराम इतीरिताः ।
पुत्रः कृष्णकुमारस्य नाम्ना माधवरामकः ॥३१७॥
बभूवामरनाथाख्यस्तस्य पुत्रोऽस्ति साम्प्रतम् ।
बाबू-देवीसहायौ द्वौ पुत्रौ तस्य तु ब्रुवे ॥३१८॥
रामकृष्णान्वयं सम्यग्रामकृष्णसुतास्त्रयः ।
सञ्जातास्तेषु च ज्येष्ठो रामनारायणाभिधः ॥३१९॥
रामनारायणसुतो बेचू नामा सुतोऽधुना ।
असनीनगरे गङ्गातीरे तिष्ठति दक्षिणे ॥३२०॥
हरिनारायणरपरोऽभूत् वंशस्यवृद्धिकृत् ।
हरिनारायणसुतो जगन्नाथोऽग्रजस्ततः ॥३२१॥
लघुर्गङ्गाप्रसादाख्य इति द्वौ सम्बभूवतुः ।
जगन्नाथस्तु चतुरः सुतानुत्पाद्य संस्थितः ॥३२२॥
गङ्गाप्रसादः कुशली वर्त्तते भ्रातृजैस्सह ।
जगन्नाथाङ्गजो ज्येष्ठः सीतारामस्तथा पुनः ॥३२३॥
नाम्ना रामसहायाख्यस्ततो वैजनसंज्ञकः ।
त्रय एते समाख्याताः कनिष्ठस्य सुतान्ब्रुवे ॥३२४॥

नाम्ना नन्दकिशोरस्य सुतांस्त्रीन् पितृवल्लभान् ।
ज्येष्ठो गोपालनामास्ति श्यामले नामको परः ॥३२५॥
गयादत्ताभिध इमे समानोदरसम्भवाः ।
शालग्रामस्य द्वौ पुत्रौ जातौ ज्येष्ठस्तयोरभूत् ॥३२६॥
मणीरामाभिधो नाम्ना गोविन्दः पुनरन्तिमः ।
मणीरामाङ्गजो नाम्ना दुर्गादत्तो हि योऽभवत् ॥३२७॥
श्रीकृष्णतनयस्तुर्यस्तथेच्छारामनामकः ।
द्वयोर्नतनयो जातः सन्ततिः पूर्वकर्मणा ॥३२८॥
कमलनयननाम्नो रामभद्रस्य सूनोः
त्रय इह समभूवन्नङ्गजा ज्येष्ठपत्न्यां ।
पुनरपि लघुपत्नीसम्भवस्सूनुरेकः
समजनि कथयामि ख्यातनामानि तेषां ॥३२९॥
यज्ञदत्त इति ज्येष्ठः शम्भूनाथोऽथ मध्यमः ।
गौरीशङ्करसंज्ञोऽपि त्रय एते मयोदिताः ॥३३०॥

इति रामभद्रवंशकथनम् ।

इत्युपमन्युवंशावल्यां यज्ञदत्तवंशवर्णनम् ।

उपमन्युवंशवर्णन

उपमन्यु कहाँ रहते थे और कहाँ उनका जन्म हुआ था यह तो इस समय कहना बड़ा कठिन है; परन्तु उनके दूध माँगने और उनकी माताके आटा घोलकर उन्हें दे देनेवाली आख्यायिकासे हम इतना जान पाते हैं कि वे गिरिकन्दरा-निवासी कन्दमूलफलाशी थे और जिस जंगलमें रहते थे, वह गायोंसे शून्य था। उपमन्युके एक भाई धौम्य थे। पर ये धौम्य पाण्डवोंके पुरोहित धौम्यसे भिन्न हैं, क्योंकि पुरोहित धौम्य देवलके भाई थे। उपमन्युके पिता अभरद्वसु थे, जो महाभारतमें व्याघ्रपाद बताये गये हैं। लड़कपनमें उपमन्युकी आर्थिक अवस्था चाहे हीन ही क्यों न रही हो, पर शङ्करके प्रसादसे आगे सुधर गयी थी और उनके पुत्र प्राचीनशाल औप-मन्यवको हम जब बृहदारण्यक उपनिषदमें महागृहस्थ महा-श्रोत्रिय ब्राह्मणरूपसे वर्णित देखते हैं, तब हमें मानना पड़ता है कि उनकी अवस्था बहुत अच्छी थी।

अपनी वंशावलीमें हमें स्थानका उल्लेख पहले पहल जाना पाठकके साथ मिलता है। जैसा पाठकको रणवीरदेव राजाने जानापुर गाँव दिया था। यह जानापुर बैसवाड़े उन्नाव जिलेके टेढ़ा गाँवसे कोई एक डेढ़ मीलकी दूरीपर है। परन्तु जानासे १२ पीढ़ियों पहले अप्रत्यक्ष रीतिसे भूपति दीक्षितके स्थानका वर्णन पाया जाता है। भूपति दीक्षित चंदेल राजा परमर्दि वा परिमालके समकालीन थे और इन्हें परिमाल राजाने स्पर्शमणि

वा पारसमणि दिया था। इनके विषयमें वंशावलीके विद्वान् लेखकने कहा है, 'जिनके द्वारपर गजारूढ़ मानो महीपति दूर दूरसे हाथीसे उतरकर अपने अपने सिर झुकाकर प्रणाम करते थे, वे विद्वन्मुकुटमणि, सर्वगुणसम्पन्न सर्वशास्त्राधिकारी, ज्ञानी, मानी, प्रमाणी और पृथिवीपर पवित्र तथा सर्वदा कीर्त्तिशाली थे। जिनको परिमाल राजाने पारसमणि लाकर दिया था, वे भूपति दीक्षित संसारमें साक्षात् दूसरे विधाता प्रसिद्ध हुए। वे श्रौत-स्मार्त्त धर्म-कर्ममें रत रहते थे तथा विद्वानोंमें आदर पाते थे, वे कान्तिके आगार थे और सिद्ध तथा भूप उनके उपनाम थे।' राजा परिमालकी भूपति दीक्षितपर बड़ी श्रद्धा थी यह तो स्पष्ट ही है तथा आस-पासके अनेक राजाओंमें भी उनका बड़ा मान रहा होगा। इससे हम समझते हैं कि भूपति दीक्षित वहीं दशार्ण प्रदेश अथवा जेजाभुक्ति वा जिजहुतमें कहीं रहते होंगे। सं० १९४० में लखनऊमें छपी कान्यकुब्ज वंशावलीमें लिखा है—'जुजुहुति ग्रामजातो भूपानाम दीक्षितोऽभवत्। जुजवतिया कुलेजातः कान्यकुब्जोऽभवत्पुनः॥' जुजहुत वा जुजहुतपुर नामका कोई ग्राम बुंदेलखंडमें नहीं है, इसलिये 'जुजाहुति ग्रामजातः' कहना ठीक नहीं है। इसके साथ ही यह भी ठीक नहीं है कि भूपति वा भूपा दीक्षित जु[illegible]वतिया कुलमें जन्मे थे और पीछे कान्यकुब्ज हो गये। विचार करनेसे इतना ही सिद्ध होता है कि भूपति दीक्षित जुजहुतमें कहीं जन्मे थे और वहीं रहते थे तथा उस समय ब्राह्मणोंकी वर्त्तमान संज्ञाएँ न होनेके कारण इस छपी वंशावलीके लेखकने समझ लिया कि भूपतिजी जुझौतिया कुलमें जन्मे थे और बादको कान्यकुब्ज हो गये। वास्तवमें

उस समय लोग केवलमात्र ब्राह्मण ही समझे जाते और कहे जाते थे।

६४२ ई० में जिझोतीमें यजुर्वेदकी मैत्रायणी शाखाका अनुयायी ब्राह्मण राजा राज करता था और एरण नगरमें (यह गाँव सागर जिलेमें है।) इसकी राजधानी थी। जिझोती नाम प्राचीन है, इससे जान पड़ता है कि पीछेसे इसे संस्कृतरूप 'जेजाभुक्ति' दिया गया है। जिझोतीका राजा सम्राट् हर्षवर्द्धनका करद होगा। बम्बईके हरिप्रसाद भगीरथकी छापी कान्यकुब्ज बृहत् वंशावलीके अनुसार 'भूपाजीने यमुनापार पिनाकपुरके राजा धर्मपालको शिष्य करके यज्ञ कराया और राजपुरोहितकी कन्यासे विवाह किया। भूपाजी जुजहुतपुरके दीक्षित कहाये।' पिनाकपुर स्थान केन नदीपर भले ही कहीं कभी रहा हो, पर आज बुंदेलखण्डमें, श्रीगोरेलालजी तिवारीके कथनानुसार इस नामका कोई ग्राम नहीं है। यदि पिनाकपुर लाक्षणिक नाम हो तो यह वही स्थान हो सकता है, जहाँ नदी धनुषाकार बही हो। ऐसा स्थान आजकल ओड़छा है जहाँ बेतवा (वेत्रवती) नदी धनुषाकार बही है। इस नदी और इसके आसपासके जंगलोंका माहात्म्य पद्मपुराणमें वर्णित है। परिमालके समयमें ओड़छेमें बुंदेलोंका राज्य था और उसका समसामयिक सहजेन्द्र उर्फ वीर बुंदेला ही हो सकता है, यह गोरेलालजीका अनुमान है। स्कन्दपुराणमें जिझोतीके बदले 'जहाहोती' नाम आया है। इसमें बताया गया है कि वहाँ ४२००० ग्राम थे। जहाहोतीके पास ही 'मालवा' और 'कान्तिपुर' (वर्त्तमान कुटवार जो ग्वालियर राज्यमें है) बताये गये हैं।

परिमाल राजा सन् ११६५ ई० में गद्दीपर बैठा था और दिल्ली, अजमेरके राजा पृथ्वीराज चौहानने सं० १२३९ सन् ११८२-८३ ई० में इसे हराया था। मदनपुरास्थित शिलालेखमें पृथ्वीराजने सं० १२३९ परिमालके पराजयका संवत् लिखा है। परिमालके समय खजुराहोमें धार्मिक, कालिंजरमें सैनिक और महोबेमें नागरिक राजधानी थी। आल्हामें लिखा है कि पृथ्वीराजने परिमालसे हिरनागर घोड़ा और पारस मांगा था, पर परिमालने हिरनागरपर जगनायक भाटको आल्हा ऊदलको मना लानेको कनौज भेज दिया था। पारसका क्या किया इसको कोई चर्चा नहीं है। प्रसिद्धि है कि परिमालने इसे धसान नदीमें फेंक दिया था। पर हमारी वंशावलीमें परिमालद्वारा भूपति दीक्षितको स्पर्श वा पारसमणि प्राप्त होनेके उल्लेखसे इस सन्देहका निराकरण हो जाता है।

इस विवेचनसे पता लगता है कि भूपति दीक्षित सं० १२३९ के लगभग जीवित थे और वर्त्तमान बुंदेलखण्डमें ही कहीं रहते थे। हम लोगोंमें ब्याहमें चढ़ायेके गहनोंमें पैरोंमें पहननेका एक गहना पहले चलता था और कहीं कहीं आज भी चलता है जो गूजरी कहाता है। ऐसा ही गहना बुंदेलखंडमें भी पहना जाता है, इससे भी इसकी पुष्टि होती है कि हमारे पूर्वज भूपति दीक्षित प्रायः ८०० वर्ष पहले बुंदेलखंडमें कहीं रहते थे। महोबा हमीरपुर जिलेमें हमीरपुर शहरसे ५४ मील दक्षिण और खजुराहोसे ३४ मील उत्तर है। परिमालके पहले धङ्गके समयमें चँदेल राज्य उत्तरमें यमुनासे दक्षिणमें नर्मदा तटतक अथवा कैमूर पर्वत श्रेणीतक तथा पूर्व पश्चिम

काशीसे बेतवा नदीतक था। पृथ्वीराज-परिमाल युद्ध अक्तूबर सन् ११८२ ईस्वीमें आरम्भ हुआ था और ११८२-८३ ईस्वीमें समाप्त हुआ था। पहुज नदीपर सिरसागढ़की लड़ाईमें परिमाल हारा था।

जो हो, भूपति दीक्षितसे १४वीं पीढ़ीमें जाना पाठक हुए हैं। इन्होंने रणवीरदेव राजासे जानापुर गाँव पाया था। पहले पहल इन्हींके सम्बन्धमें वंशावलीमें स्थानका उल्लेख हुआ है। भूपति दीक्षितके वंशजोंमें कौन बुंदेलखण्डसे बैसवाड़ेमें आया यह जाननेका कोई उपाय नहीं है। कोई ५०० वर्ष हुए राजा नेवन नामधारी एक रघुवंशी क्षत्रिय अयोध्यासे जाकर वर्त्तमान पुरवा गाँवसे ४ मील पश्चिम एक स्थानपर बसे थे, जो शायद इन्हींके नामपर आजकल नेवायाँ कहलाता है। कुछ समय उपरान्त लोनी नदी उस स्थानको बहा ले गयी। इसके अनन्तर इन्हीं राजाके एक वंशधर रणवीरसिंह नेवायेंके राजा हुए। इन्होंने भवानीपुर, सोकीपुर और कल्यानपुरकी जमीनपर पुरवा कस्बेकी नींव डाली। उस समय पुरवा रणवीरपुर कहलाता था। परन्तु पीछे रणवीरपुरके बदले भूलसे लोग रंजीतपुर कहने लगे और इस प्रकार रणवीरपुर रंजीतपुरवा बन गया। रणवीरसिंह राजाके राज्यकी सीमा कहाँसे कहाँतक थी इसका तो पता नहीं, पर इसमें सन्देह नहीं कि जिन राजा रणवीरदेवने जानाजीके वेदपाठसे प्रसन्न होकर उन्हें जानापुरका शासन दिया था, वे ये ही राजा रणवीरसिंह हैं। जानापुर उन्नाव जिलेकी पुरवा तहसीलके अन्तर्गत घाटमपुर परगनेके टेढ़ा गाँवसे एक मील पश्चिम है।

जानाजीके पिता वेणीदत्त दीक्षित थे और जानाजी भी पहले दीक्षित ही कहाते थे; परन्तु पीछे वे कदाचित् जानापुर पानेके बाद पाठक और उपमन्युवंशके तिलक प्रसिद्ध हुए। इनके दो पुत्र नमऊ वा नेमिदेव और गदाधर आनन्दसागरके ज्ञाता हुए। ये जानापुरमें ही रहे और जानापुरके पाठक कहाये। नेमिदेवके पुत्र गोपीनाथने आवसथ्य यज्ञ किया और इनकी दो स्त्रियोंसे नौ पुत्र उत्पन्न हुए। इनमें चारके पुत्र नहीं थे और पाँच वंशकर प्रसिद्ध हैं। इनमें एक पुत्र रजऊके पौत्र लोल और पराशर हुए तथा इनके पुत्रादि उन्नावसे २२ मील उत्तर-पश्चिम परगना फतहपुर-चौरासी तहसील सफीपुरमें गंगातटपर जाजमऊमें रहने लगे, जिसे औरंगजेबके जमानेमें जाजीसिंह चँदेलने बसाया था। यह स्थान कानपुर नगरके निकट ही है। रजऊके एक भाई विद्याधर थे, जिनके नगई प्रभृति पुत्र हुए। इन्हें राजाने 'ब्रह्म' पदवी दी थी, पर कहाँके राजाने यह पदवी दी थी लिखा नहीं है। उत्कलमें 'ब्रह्म' पदवीसे कुछ लोग भूषित हैं। रजऊके एक दूसरे भाई कामदेव थे। कहते हैं कि इनकी कामदैवी पद्धति प्रसिद्ध थी, पर वह क्या थी यह हमें मालूम नहीं। अस्तु, विद्याधर और रजऊके तीन और भाई गोशल, कवर और भट्टू वंशकर हुए।

कवरके पुत्रका नाम घाटम था। सम्भव है कि जैसे जानाके नामपर जानापुर बसा था, वैसे ही घाटमके नामपर उन्नाव जिलेका घाटमपुर बसा हो। इनके आठ पुत्र हुए, पर ये आठो इनके चचेरे भाई ब्रह्मदत्तके नामसे अठभैया अवस्थी ब्रह्मदत्तके कहाये। घाटमके ज्येष्ठ पुत्र सुरेश्वरके पुत्र देवर्षि

घाघरापार त्योरासीमें बसे। दूसरे पुत्र पीताम्बरके वंशज कानपुर जिलेके डोमनपुरमें, हरिहरके डालामऊमें, खेमके लखनऊमें और विश्वरूपके परियरमें रहे। मकरन्दके पुत्रादि ब्रह्मावर्त्तके ख्योरा ग्राममें बसे। डालामऊ या डलमऊ रायबरेली जिलेमें और ख्योरा पुराने कानपुरके पास है तथा डोमनपुर भी कानपुर जिलेके करबिगवाँ स्टेशनके पास है। परियर बिठूर कानपुरके उत्तर गंगापार है। पहले परियरको परिहर कहते थे, क्योंकि यहीं सीताजीका त्याग—परिहरण हुआ था और यहीं लवकुश पैदा हुए थे। परियरके पास तीरोंके तांबेके फल मिलनेसे लोग समझते हैं कि इन्हींसे श्रीरामकी सेना और लवकुशमें युद्ध हुआ था। सुरेश्वरके दूसरे भाई जौनके वंशज देवदासादि तथा तीसरे भाई आनन्दके पौत्रादि मलावै ग्राममें बसे, जो इस समय फतहपुर जिलेमें है और प्रसिद्ध मलवा स्टेशनके पास है। अकबरके समय मलावै शायद बड़ा शहर था, क्योंकि वह लखनऊकी सरकारके अन्तर्गत था। आईने अकबरीसे जाना जाता है कि जहाँ मेलावेहसे सरकारको ३५,९८,७१३ दाम मालगुजारीमें मिलते थे, जहाँ हवेली सहित लखनऊसे १७,४६,७७१ दाम ही आय होती थी। सुरेश्वरके ही और एक भाई भैरवके पुत्र जयानन्दादि और दूसरे लक्ष्मणके पुत्र देवशर्मादि हरदोई जिलेको सांडी नगरीमें जा बसे।

पहले जानाजी जिस उन्नाव जिलेके एक गाँव जानापुरमें बसे थे, उनकी पाँचवी छठी पीढ़ीमें उनके पौत्र गोपीनाथके वंशज उन्नावके गाँवोंमें ही नहीं, रायबरेली, कानपुर, फतहपुरके गाँवों और लखनऊ तथा हरदोई और घाघरापार अवधमें भी

बसने लग गये। यद्यपि नेमिदेवके भाई गदाधर जानापुरमें ही रहे और जानापुरी पाठक कहाये, जिनके उत्तराधिकारियोंके हाथमें आज भी जानापुर है, तथापि यह नहीं कहा जा सकता कि भट्टू और गोशल तथा इनके दायाद जानापुरमें ही रहे या अन्यत्र चले गये। भट्टूके पुत्र दिवाकर थे और इनके पौत्र जगन्नाथने वाजपेय यज्ञ किया था, पर कहाँ किया था इसका कोई संकेत नहीं मिला। कान्यकुब्ज दर्पण नामक वंशावलीमें लिखा है कि जगन्नाथजीने चन्दनपुरमें वाजपेय यज्ञ किया था, पर यज्ञ पूरा न होनेसे आधे अपनेको चन्दनपुरके वाजपेयी और आधे चिलौलीके दुबे कहते हैं। यह बात समझमें नहीं आती, क्योंकि हमारी किसी वंशावलीमें यज्ञ पूर्ण न होनेकी चर्चा नहीं है। और भी, हमने सुना है कि जगन्नाथजीका यज्ञ महाशर्मजी और विष्णुशर्मजीके यज्ञोंसे भी अच्छा हुआ था और यह तो परमकृष्णजीकृत वंशावलीमें स्पष्ट ही लिखा है कि उनके यज्ञमें गङ्गाजी स्वयं उपस्थित हुई थीं। रह गयी यह बात कि कुछ लोग अपनेको चिलौलीके दुबे कहते हैं, सो इसका कारण यह है कि वाजपेयी संज्ञा तो वाजपेय यज्ञकर्त्ताकी ही होती है, उसके चाचा, भाइयों या भतीजोंकी नहीं। इसलिये जगन्नाथजी और उनके पुत्रों हरिनारायणजी आदिकी संज्ञा ही वाजपेयी हुई और शेष ज्योंके त्यों रह गये। इसके सिवा वे पहले त्रिवेदी थे, द्विवेदी नहीं, इससे यज्ञ अपूर्ण रहनेकी बात ठीक नहीं। जगन्नाथजीके पिता रविदास पाँच भाई थे, जिनमें कोशके पुत्र मधुसूदनके पुत्र रत्नपुरमें तथा अर्चितके पुत्र रत्नपुर और अध्वर्युपुरी वा धुरजरियापुरमें बसे।

कवि गोशल बड़े यशस्वी और विद्वान् हुए जिन्होंने शास्त्रार्थमें जगत्को जीता। इनके तीन बड़े प्रतापी और विद्वान् पुत्र ब्रह्मदत्त, देवदत्त और यज्ञदत्त हुए। ये ब्रह्मदत्त वे ही हैं जिनके नामसे घाटमके आठो पुत्र अठभैया अवस्थी ब्रह्मदत्तके प्रसिद्ध हुए हैं। ब्रह्मदत्तके छ ही पुत्र थे, जिनमें तीसरे पुत्र चन्द्राकरके पुत्र दिनकर सकलशास्त्रज्ञ और विष्णुभक्त थे। इनके तीनो अग्नियोंकी भाँति विद्यापति, सभापति और खेम ये तीन पुत्र हुए, जिनके पुत्र-पौत्र सदाचार और विचारमें दक्ष निकले। सभापतिके दूसरे पुत्र हरिशङ्करजो हुए जिन्होंने जाना पाठकसे अपने पुत्रों तक उपमन्युवंशावली श्लोकोंमें लिखी थी, जो इस पुस्तकमें प्रकाशित है। ब्रह्मदत्तके पुत्र मण्डन हुए, जिनके वंशके लक्ष्मण अपने भाई सहित उत्कलमें जा बसे। इसी वंशके छँगऊ बरी या बरियामें बस गये। देवदत्तके वंशके धर्मदास, भवदास और खेमानन्द औदीच्य देशमें जा बसे और पुरुषोत्तम तथा रत्नाकर लखनऊमें बस गये। देवदत्तके पुत्र अमरके प्रपौत्र शङ्करके पुत्र पुरैनिया ग्राममें रहे और अमरके ही अन्य वंशज श्रीकान्त, हर्ष और शार्ङ्ग ब्रह्मावर्त्त-भद्रसमें बस गये। देवदत्तके कई वंशज बिहटा, उत्पलारण्य, इटावा, एकडला, कटोली रौतापुर, और दरियाबाद आदिमें बसे।

गोशलके तीसरे पुत्र यज्ञदत्तने सोमयाग किया था, इससे ये दीक्षित प्रसिद्ध हुए। वंशावलीके लेखक परमकृष्णजीने लिखा है कि ये जगज्जेता और दीक्षित विख्यात हुए तथा संसारकी असारता जानकर इन्होंने संन्यास ले लिया था। जगज्जेताका अर्थ यह न समझना चाहिये कि रणक्षेत्रोंमें ये विजयी हुए थे,

पर शास्त्रार्थमें जगज्जेता थे। कहते हैं कि शास्त्रार्थका चस्का इन्हें इतना अधिक था कि संन्यासाश्रममें अनुभूति स्वरूपाचार्य नाम रखकर भी इन्होंने शास्त्रार्थ करना नहीं छोड़ा। प्रसिद्ध है कि शास्त्रार्थमें कहीं 'पुंसु' पद इनके मुँहसे 'पुंक्षु' निकल गया, क्योंकि दाँत गिर गये थे। इसपर जैसा शास्त्रार्थमें पण्डित किया करते हैं, इनसे कहने लगे कि तुम अशुद्ध बोल गये हो; इसे शुद्ध सिद्ध करो। इसपर इन्होंने उत्तर दिया कि कल इसका प्रमाण देंगे। बाद रातको बैठकर 'सारस्वती प्रक्रिया' लिखी जिसमें 'पुंक्षु' रख दिया तथा दूसरे दिन विपक्षियोंको दिखाकर उनका मुँह बन्द कर दिया। यह ग्रन्थ आजकल 'सारस्वत व्याकरण' नामसे प्रसिद्ध है। यज्ञदत्तकी मिश्र अग्निहोत्री और दीक्षित तीन पदवियाँ थीं और इनके कनिष्ठ पुत्र वाजपेयि विष्णुशर्मने अपने 'चन्द्रोदयाह्निक' नामक ग्रन्थमें इन्हें 'मिश्राग्निहोत्रिदीक्षित' लिखा भी है, पर इन्होंने अपनेको 'दीक्षित' ही कहा और यही इनको पदवी रही।

यज्ञदत्तके दो पुत्र हुए महाशर्म और विष्णुशर्म और दोनोंने वाजपेय यज्ञ किया, इसलिये दोनोंके वंशधर वाजपेयी प्रसिद्ध हैं। महाशर्मजीका वाजपेय यज्ञ कहाँ हुआ था यह निश्चित रूपसे हमें नहीं मालूम, परन्तु सुनते हैं कि बटेश्वरमें हुआ था। हमारी वंशावलियोंमें यज्ञस्थानोंकी कोई चर्चा नहीं है। महाशर्मजीके प्रपौत्र कुलमणिने सोमयाग किया था। इनके चार पुत्र काशीराम, मणीराम, गोपीनाथ और मथुरापति वंशकर्ता प्रसिद्ध हैं। इनमें भी मणीरामजीकी ख्याति इतनी अधिक है कि इन्हें कई लोग वाजपेय यज्ञकर्त्ता समझते हैं और कहीं कहीं

ऐसा लिख भी रखा है। परन्तु हमारी वंशावलियोंमें ये सोम-याजीतक नहीं लिखे हैं। मणोरामजीकी पहली पत्नीसे मनोरथ, बलभद्र और लालमणि तथा दूसरीसे मित्रानन्द और महामुनि हुए। मित्रानन्दके वंशज नित्यानन्द नामसे तथा महामुनिके दायाद इनके नामसे बटेश्वरके वाजपेयी कहाते हैं।

वाजपेयी इस उपमन्यु वंशमें तीन हुए, परन्तु सबसे अधिक प्रसिद्धि विष्णुशर्मजीकी हुई। वंशावलीमें लिखा है कि ये मीमांसा और आगमोंके पारदर्शी और अतिनिपुण तथा पातञ्जल योगदर्शनमें बहुत अधिक गति रखनेवाले, तर्कशास्त्र वा न्यायदर्शनमें शेषके समान, गम्भीर विचारोंमें चतुर और सांख्यमें कपिलमुनिके समान, श्रौतस्मार्त्तकर्ममें तो साक्षात् ब्रह्माके प्रतिनिधि और वेदान्तके वेत्ता पृथिवीपर बहुतसे यज्ञ करनेके लिये विष्णुशर्मा नामसे उत्पन्न हुए। वे ब्रह्मण्य, विनयशील, सुवक्ता और निरहङ्कार साक्षात् धर्मके अंग थे तथा ब्राह्मणोंका भोजन परोसनेके समय उपरना खसकने लगा तो वे चतुर्भुज हो गये।

विष्णुशर्मजीके जन्मसंवत् और मरणसंवत् तथा जन्म-स्थान, गुरु आदिका हमें कोई वर्णन नहीं मिला और न हमें वंशावलियोंमें यही लिखा मिला कि उन्होंने कौन यज्ञ कब और कहाँ किया था। परन्तु स्वर्गीय यशोदानन्दनजी (बब्बूजी) वाजपेयीने अपने स्मरणार्थ लिख रखा था कि जुजहुत ग्राममें सं० १४५६ में विष्णुशर्मजीका जन्म हुआ और सं० १५०८ तक ब्रह्मचारी रहकर उन्होंने विद्याध्ययन किया। सं० १५२६ तक वे अग्निहोत्री रहे और इसी वर्ष माघमें कोटवा ग्राममें

जाकर गोविन्दसाहके धनसे सोमयाग किया। अनन्तर वहाँसे नाहिलके राज्यमें खनौत नदीपर गोरा ग्राममें वाजपेय किया, जिसके लिये धन जालपरायने दिया। यहाँ नाहिलके रावराजा कीर्त्तिसाहने यज्ञ और उसके रक्षार्थ १४ ग्राम दिये और ऋत्विजोंको भी कुछ ग्राम दिये। यहाँ वे २३ वर्ष रहे। फिर यहाँसे गोकर्ण क्षेत्रमें चले गये। इसका कारण अन्यत्रसे यह मालूम हुआ कि कीर्त्तिसाहने अपने लड़केकी बरातमें चलनेका इनसे आग्रह किया था, जिसे इन्होंने स्वीकार नहीं किया। सं० १५६१ वैशाख शु० १५ को गोकर्ण क्षेत्रमें ही इनका शरीरान्त हुआ और इनकी स्त्री सती हो गयीं। अन्तिम संस्कार तीर्थसे पश्चिममें हुआ। सतीचौतरा बना हुआ है, जिसका जीर्णोद्धार बाबा मुकुन्दलालजीने कराया था। विष्णुशर्मजीके रचे हुए ये नौ-ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं:— (१) कीर्त्तिप्रकाश, (२) दीक्षातत्वसुधानिधि, (३) गृह्यान्तदीपिका, (४) प्रेतमार्गप्रयोगभास्कर, (५) श्रद्धान्धभास्कर, (६) निर्णय-चिन्तामणि, (७) यागप्रकाशिका, (८) चन्द्रोदयाह्निक और (९) आह्निकप्रयोग।

इस वर्णनमें यह शंका होती है कि जब जानाजी बैसवाड़ेके जानापुरमें आ गये थे, तब उनसे छठी पीढ़ीमें विष्णुशर्मजी जुजहूतमें कैसे पैदा हुए। यही नहीं, इस बीचमें उनके किसी वंशजके फिर दशार्ण—बुंदेलखंडमें जानेका वर्णन तो मिलता ही नहीं, उलटे अन्तर्वेद, बैसवाड़े और उत्तर अवधतक फैलनेके ही प्रमाण मिलते हैं। संवतोंके विषयमें कुछ कहा नहीं जा सकता। यह निस्सन्देह है कि उन्होंने अनेक ग्रन्थोंकी रचना की है, जिनमें श्राद्धान्धभास्कर पहला और आह्निकप्रयोग अन्तिम

जान पड़ता है, क्योंकि पिछलेमें ग्रन्थसमाप्तिसूचक सङ्कल्पमें सं० १५५९ मार्ग शु० १२ लिखा है और दूसरेके समाप्तिसूचक संकल्पमें वे स्वराट् सम्राट् अथवा महायाज्ञिक नहीं लिखे गये, केवल अग्निहोत्री बताये गये हैं, यथा 'इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीमदनुभूतिस्वरूप, दीक्षित यज्ञदत्तात्मजाग्निहोत्रि विष्णुशर्मविरचिते श्राद्धान्धभास्करे प्रयोगपद्धतिः समाप्तः।' कीर्त्तिप्रकाश निबन्ध ग्रन्थ है और उसमें तिथियों और व्रतादिका निर्णय तथा कथाएँ हैं। कथाभाग छोड़कर इसे हिन्दी-भाषान्तर सहित रा० ब० सर शीतलाप्रसाद वाजपेयी, के० टी० सी० आई० ई० ने प्रकाशित भी किया है। आह्निक प्रयोग भी हिन्दी टीका सहित उन्होंने छपाया है। कीर्त्तिप्रकाशसे हम यह जान सकते हैं कि कीर्त्तिसिंहके नामपर यह ग्रन्थ रचा गया है और उनकी सेवाका यह पुरस्कार है।

कीर्त्तिसिंहका भी विशेष पता नहीं दिया है, केवल इतना ही लिखा है कि गौरवंशावतंस जैत्रसिंह कुलतिलक महाराय कनकसिंहके पुत्र कीर्त्तिसिंह थे। कीर्त्तिसिंहके विष्णुशर्मजीको ग्राम देनेकी बात प्रसिद्ध है और यह भी प्रसिद्ध है कि राजासे इनका मनान्तर बरात न चलनेके कारण ही हो गया था। कहा जाता है कि इनके पिता यज्ञदत्तजी जब जयपुर जाते थे, तब राजा दस कोस आगेसे उनका स्वागत करने आते थे। विष्णुशर्मजी यही सोचकर जब गये और राजा स्वागतार्थ न पहुँचे, तब लौट पड़े और इन्होंने फिर राजाके यहाँ न जानेका निश्चय कर लिया। जब राजाको इसका पता लगा तो उन्होंने घोषणा की कि जो कोई विष्णुशर्मजीको हमारे यहाँ लावेगा, उसको हम मुँहमाँगा

पुरस्कार देंगे। कीर्त्तिसिंह समझते थे कि यह वे कर सकते हैं, इसलिये उक्त राजासे कहा कि मेरे पुत्रके साथ अपनी राजकुमारीका ब्याह आप करें तो मैं उन्हें ला सकता हूँ। राजाने स्वीकार किया, पर विष्णुशर्मजीके अस्वीकार करनेपर कीर्त्तिसिंह असन्तुष्ट हुए। इसपर विष्णुशर्मजी गोलागोकर्णनाथ चले गये और अपने अन्तिम समयमें पुत्रोंसे कह गये कि तुम लोग उस राज्यमें न रहना और जो गाँव राजाने दिये हैं, उन्हें दानमें दे डालना। इसपर उनके पुत्रोंने महापात्रोंको गाँव दे दिये और लखनऊ चले आये।

बिष्णुशर्मजीके ६ पुत्र हुए, जिनमें ज्येष्ठ और श्रेष्ठ हरदेव हुए, जो ओझा और हरिहर नामोंसे भी प्रसिद्ध थे। ये सब गुणोंसे युक्त थे और छओ अंगों सहित वेद इनके जिह्वाग्र रहते थे। दूसरे पुत्रका नाम बलभद्र था, जो सब शास्त्रोंके ज्ञाता थे। ये अपुत्र रहे। तीसरे पुत्रका नाम लक्ष्मण और किसी-किसीके अनुसार लक्ष्मीनिधि वा लक्ष्मीनारायण था। इनके पुत्र कृष्ण अग्निहोत्री थे और यज्ञमें इनकी रुचि रहती थी। इनके पाँच पुत्र हुए पृथ्वीधर (पीथा), हीरा, बोशा, धरणीधर (धन्नो) और तारापति। कृष्ण अपने इन पुत्रादिके साथ साहिपुरमें बसे। आगे चलकर यशोदानन्दनजीके लेखके अनुसार पीथाके पुत्र जगन्नाथ वाजपेयीपुरमें, हीराके पुत्र चत्ते, मत्ते और बीर असनीमें तथा भगोले बैहारमें बसे। बोशाके चार पुत्रोंमें उर्वीधर असनीमें, केशवराम वाजपेयीपुरमें तथा गयादत्त और कमलनयन मोहारमें बस गये। धन्नोके चार पुत्रोंमें दो यदुनाथ और भवनाथ मौजमाबादमें रहे, गिरिधर

तथा मुसोके पुत्रादि मौजमाबाद और नारेपार बसे। ताराके पुत्र रघुनाथ हाजीपुरमें बसे। शिवशर्म, देवशर्म और हरिकेशव ये विष्णुशर्मजीके शेष तीनो पुत्रोंके नाम हैं। इनमें शिवशर्म लखनऊसे पुरवामें जा बसे और देवशर्म तथा हरिकेशव बाजपेयीपुरमें बस गये। ये तीनो लखनऊके वाजपेयी ही कहाते हैं।

हरिहर वा हरदेव ओझाके दो पुत्र छंगे और गंगे हुए। गंगे अपुत्र रहे और छंगेका वंश चला। छंगेके दो पुत्र हुए। ज्येष्ठका नाम प्रीतिकर और कनिष्ठका रामभद्र हुआ। प्रीतिकर विष्णुशर्मके सामने ही हुए थे और प्रपौत्रपर इनकी अधिक प्रीति होनेके कारण ये विष्णुशर्माप्रीतिकर कहाये। यह नाम बहुत बड़ा था, इसलिये प्रीतिकर नामसे ही प्रसिद्ध हुए। प्रीतिकरने सोमयाग किया था, इसलिये ये अपनेको सोमयाजी ही कहते थे। इनके छ पुत्र रामचन्द्र, बुद्धिशर्म, वेणीदत्त, गणपति, नरहरि और पीताम्बर सगे भाई थे। इनमें बुद्धिशर्मने सोमयाग किया था। इनको पहली पत्नीसे दो पुत्र लाल और लक्ष्मण सर्वगुण सम्पन्न तथा धर्मार्थ काममोक्षके ज्ञाता हुए थे। दूसरी पत्नीसे चार पुत्र हुए जो भीखू, लोकमणि, शङ्कर और मणीराम कहलाये। बुद्धिशर्मने धर्मसंकटमें पड़कर बुढ़ापेमें छंगेके शुक्लोंकी लड़कीसे ब्याह किया था, जिसे भाइयों और लड़कोंने बहुत नापसन्द किया। बात यों हुई कि जिस लड़केसे इस लड़कीका ब्याह उन्होंने ठीक कराया था, वह ऐन मौकेपर मुकर गया और लड़कीका पिता उनके पास आकर बोला कि मेरी इज्जत चली जायगी, जो इस लग्नमें ब्याह न होगा।

उन्होंने उत्तर दिया कि वर मिलनेसे ही ब्याह होगा; मेरे साथ तो ब्याह होगा नहीं। इसपर उसने कहा कि आपहोके साथ कर दूँगा और ब्याह कर दिया। जब भाइयों और पुत्रोंने बुरा माना, तब बुद्धिशर्मजी जहाँ रहते थे, वहाँसे निकलकर अपनी यज्ञशालामें जाकर रहने लगे। पुराना घर ऊँचेपर था और यज्ञशाला खालेमें थी। इस लिये पुराने घरवाले ऊँचेके और यज्ञशालावाले खालेके वाजपेयी कहलाने लगे।

सोमयाजी बुद्धिशर्मजीकी कनिष्ठ पत्नीके चार पुत्रोंमें लोकमणि तो अपुत्र रहे, परन्तु शेष तीनो भीखू, शङ्कर और मणीराम वंशकर्त्ता हुए। भीखूके वंशधर इस समय नाना स्थानोंमें बसते हैं। लखनऊ, कानपुर जिलेका गौरी भगवन्तपुर ग्राम, लखनऊ जिलेके हरौनी स्टेशनके समीप लतीफनगर ग्राम तथा हरदोई जिलेका भगवन्तनगर ये उनके प्रसिद्ध स्थान हैं। परन्तु शंकरका कुटुम्ब बहुत कालतक लखनऊमें ही रहा और अब उसका अधिकांश लखनऊ रानीकटरेमें रहता है। शंकरके तीन पुत्र टीकापति, चूड़ामणि और देवीदत्त हुए। देवीदत्त अपुत्र रहे और शेष दोनों विद्वान् भाइयोंके वंश वर्त्तमान हैं। मणीरामका वंश अनेक स्थानोंमें है।

टीकापतिके तीन पुत्रोंमें ज्येष्ठ तेजनाथके पुत्र वैद्यनाथ और इनके माखन तथा माखनके शिवसागर हुए। इन्हीं शिवसागरने परमकृष्णजीकी श्लोकोंमें बनायी हुई वंशावली लिखी है और इसका उल्लेख भी उसमें हुआ है। इनके हाथकी लिखी पार्वणश्राद्धकी पोथी, जिसपर मार्ग शु० सप्तम्यां गुरौ सं० १८८९ शक: १७५४ लिखा था, हमने क्षमापतिजीके पास

देखी थी। इसी वंशके क्षमापतिजी उपनाम छम्मीका लखनऊमें वैद्योंमें अच्छा नाम और यश हुआ। ये ऐसे मेधावी थे कि बिना गुरुके इन्होंने आयुर्वेदका अध्ययन और चिकित्साका अभ्यास किया था। इनके धनसे रानीकटरेमें इनके स्वर्गवासके उपरान्त गणेशमन्दिरका निर्माण हुआ है। इनके ज्येष्ठ भ्राता उमादत्त हिकमत या हकीमी करते थे। टीकापतिके कनिष्ठ पुत्र जीवलालके पौत्रके पौत्र यशोदानन्दन उपनाम बब्बूजीको वंशावली संग्रह करनेका बड़ा चाव था। इसके सिवा इनके पास इस ढंगका बहुत मसाला था, जो कृपा करके इन्होंने हमें सन् १९१६ ई० में दे दिया था और जिसका उपयोग इस वंशावलीमें यथास्थान किया गया है। दीनानाथके ही वंशमें बालमुकुन्द उपनाम पग्गाने भी अपनी देशभक्तिके कारण नाम पाया है। देशहितके आन्दोलनमें ये आप ही कई बार जेल नहीं गये, इनके ज्येष्ठ पुत्र उमानारायण (माटू) भी जा चुके हैं। पग्गाजीके पुत्रोंको भी उनके नाना पांडे गौरी शङ्करकी सम्पत्तिका आधा भाग मिला है। टीकापतिके सभी वंशधर लखनऊमें ही रहते हैं।

चूड़ामणिके पुत्र सुखलालके तीन विद्वान् पुत्र लालमणि, मोहनलाल और काशीनाथ हुए। लालमणिके पौत्र दुर्गाप्रसाद बड़े प्रतापी हुए। नवाबी अमलदारीमें ये मीर मुंशी थे। अंगरेजी अमलदारीमें लखनऊमें जुडीशल कमिशनर इनसे हिन्दू-धर्मशास्त्रके दायभागपर व्यवस्था लिया करते थे। सन् १८६३ ई० से अंगरेजी सरकार इन्हें २३१॥) मासिक पेनशन देती थी। सन् १८७१ की ज्येष्ठ शु० ७ को कानपुरमें गङ्गाघाटपर

इनका स्वर्गवास हुआ। इनके पुत्रका नाम श्याममनोहर था। सन् १८७२ में श्याममनोहरजो लखनऊ वार्ड्स इन्सटिट्यूशनके गवरनर नियुक्त हुए और सन् १८७८ तक इसी पदपर रहे। सन् १८८० में इनका शरीरान्त हो गया। इनके पुत्र शीतला-प्रसाद बहुत प्रसिद्ध हुए और अंगरेजो राज्यमें इनके वंशकी बड़ी प्रतिष्ठा हुई।

शीतलाप्रसादजोका जन्म वैशाख कृ० ८ सं० १९२२ ता० १९ अप्रैल सन् १८६५ को हुआ। इन्होंने संस्कृत, हिन्दी, उर्दू और फारसी पढ़कर १८८५ में बी० ए० और १८९० में वकालतकी परीक्षा पास की, तथा इसी वर्ष ये मुन्सिफ बनाये गये। १९२३ तक जिला और दौरा जजी करके इन्होंने पेनशन ले ली। इसके बाद जयपुर महाराजने इन्हें अपना प्रधान न्यायाधीश और कौन्सिलका जुडीशल मेम्बर बनाया। १९४४ में इस कार्यसे अवसर ग्रहण करके ये आजकल लखनऊमें ईश्वराराधन कर रहे हैं। इनके कार्यसे प्रसन्न होकर सरकारने इन्हें रायबहादुर, सी० आई० ई० और सर (नाइट) पदवियाँ दीं। ३० हजार रुपये इनाममें जयपुर राज्यने दिये। शीतलाप्रसादजीके तीन पुत्र हुए रमाशङ्कर, गिरिजाशङ्कर और शारदाशङ्कर। रमाशङ्करने बैरिस्टरी पास करके सरकारी नौकरी की और अन्तको डाइरेक्टर आव इनफारमेशन पदतक पहुँचे। ये अल्पायु हुए। गिरिजाशङ्कर और शारदाशङ्कर दोनोने सिविल सरविस परीक्षा पास की। गिरिजाशङ्कर वायसरायकी शासन सभाके मेम्बर रहकर आजकल वाशिङ्गटनमें भारतके गवरनर जेनरलके एजेंट हैं। इनकी सेवासे प्रसन्न होकर सरकारने इन्हें

(सर) के० सी० एस० आई० की उपाधि दी है। इनके ज्येष्ठ पुत्र उमाशङ्कर भारतमें रायटर्स कम्पनीमें काम करते हैं। द्वितीय पुत्र दुर्गाशङ्करने अमेरिकासे गृहनिर्माणशास्त्रकी डिग्री पायी है।

चूड़ामणिके मध्यम पौत्र मोहनलालजीके भी तीन पुत्र हुए शिवानन्द, सदानन्द और ब्रह्मानन्द। इस वंशमें विद्वान् ही होते थे, क्योंकि सबमें विद्याभिरुचि थी। शिवानन्दजी जवानीमें ही परलोकवासी हो गये थे। इनके पुत्र जानकीनाथका जन्म सं० १८६३ में हुआ था। ये अपुत्र रहे। सदानन्दजी भी अपुत्र थे। ये व्याकरणादि शास्त्रोंके साथ ज्योतिष और रमलके अच्छे पण्डित थे। बृहत् पाराशरीके कुछ अंशपर इनकी संस्कृत टीका पायी गयी है। अपनी वृद्धावस्थामें ये गङ्गा-सेवनके लिये पुराने कानपुरमें जाकर रहे थे, जहाँ इनके एक कायस्थ शिष्यने रहनेके लिये इन्हें मकान दे दिया था। यह मकान कब इन्हें मिला था और कब ये कानपुरमें रहने लगे थे तथा कब इनका स्वर्गवास हुआ यह जाननेका कोई उपाय नहीं है। परन्तु सं० १८९१ के आरम्भतक वे जीवित थे, क्योंकि रमलकी रीतिसे अपने कुटुंबियों और इष्टमित्रोंके लिये जो फल इन्होंने निकाले थे, वे वर्त्तमान हैं। अवश्य ही इनका शरीरान्त सं० १८९१ में या इसके बाद हुआ होगा। पर पुराने कानपुरका सम्बन्ध इससे पुराना जान पड़ता है, क्योंकि सं० १८५३ वैशाख शु० ३ मङ्गलवारको हरिप्रसाद मिश्रके घाट और शिवालयकी प्रतिष्ठामें चूड़ामणिके वंशके कई पण्डित सम्मिलित हुए थे। आगे चलकर मोहनलालजीके वंशको इसी घरमें शरण मिली और वह इसीमें बस गया।

मोहनलालजीके कनिष्ठ पुत्र ब्रह्मानन्दके पाँच पुत्र हुए, ज्येष्ठ पत्नीसे एक रामचन्द्र और कनिष्ठ पत्नीसे चार केवल कृष्ण, केदारनाथ, मुकुन्दलाल और गोविन्द प्रसाद थे। इन सबके जन्म और मरणके संवतोंका हमें ठीक ठीक पता नहीं है। हाँ, मुकुन्दलालजीका जन्मकाल उनके ५३वें वर्ष-पत्रसे हमें सं० १८७० पौष कृ० १४ ज्ञात हुआ है। इस प्रकार सं० १८७१ वैशाख कृ० ९ बुधवारतक जिस दिन परमकृष्णजीने वंशावली लिखना आरम्भ किया था, ब्रह्मानन्दजीके चार पुत्रोंके जन्म हो चुके थे। रामचन्द्रजी लखनऊके बादशाह वाजिदअलीशाहके धर्माध्यक्ष थे। वे हिन्दू दायभागके उन व्यवहारोंका निर्णय करते थे, जो बादशाहकी अदालतमें फैसलेके लिये जाते थे। उन्हें मासिक ४३५॥=) इसकी दक्षिणा मिलती थी। लखनऊ तथा सामन्त राज्योंमें भी उनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। वे धर्मशास्त्र, ज्योतिष, रमल तथा न्यायके बड़े पण्डित माने जाते थे। सन् १८५६ में शायद इनका शरीरान्त हो गया था। अपनी मृत्यु और गदरके सम्बन्धके इनके भविष्यकथन सच्चे सिद्ध हुए थे।

लालमणिजी तथा मोहनलालजीकी तरह काशीनाथजीके भी तीन पुत्र थे। परन्तु जहाँ बड़े और मंझले भाईके वंशज लखनऊमें ही रहे, वहाँ इनके प्रायः सभी दायाद लखनऊके बाहर चले गये। इनके तीनो पुत्रोंके नाम हुए परमकृष्ण, तनसुख वा केशवराय तथा घनश्याम। परमकृष्णजीका हम लोगोंको बहुत कृतज्ञ होना चाहिये, क्योंकि इन्होंने उपमन्यु ऋषिसे अपने समयतकके लोगोंका जो वंशवर्णन श्लोकोंमें किया है, उससे इस वंशावलीके तैयार करनेमें बड़ी सहायता मिली है। परम-

कृष्णजीके प्रपौत्र देवदत्तजी (पुरन्दर कवि) हिन्दीके अच्छे कवि थे।

तनसुखजीके पुत्र हरिनाथजी सीतापुर जिलेके मुन्द्रासन-ग्राममें जाकर बस गये थे। यह ग्राम कटेसरके राजाकी जमीन्दारीमें है और राजा साहब मोहनलालजीके शिष्य थे। मोहन-लालजी जब कभी राजाके यहाँ जाते थे, तब अपने भतीजे परमकृष्णजीको साथ ले जाते थे। इनके बाद परमकृष्णजी अपने भतीजे हरिनाथजीको ले जाने लगे। इस प्रकार हरिनाथजी राजाके गुरु बन गये और कालान्तरमें मुन्द्रासनवासी हो गये। राजाने उन्हें गुरु मान नरैनापुर और कैमहरा दो गाँव भोजना-च्छादनके लिये दे दिये। इनके चार पुत्र मुरलीधर, सुदर्शन, विद्यापति और क्षमापति हुए। मुरलीधर अपुत्र रहे। परन्तु शेष तीनोके वंश चले। विद्यापतिजीके पुत्र पुण्यदत्तजी पण्डित हुए। इस समय हरिनाथजीके वंशके सिवा घनश्यामजीके एक पौत्र भवानीप्रसाद वा मन्नाके उत्तराधिकारी भी मुन्द्रासनमें ही रहते हैं।

घनश्यामके तीन पुत्र गोपीनाथ, बिहारीलाल और गोकर्ण-नाथ हुए। गोपीनाथके ज्येष्ठ पुत्र रामरत्न पटने चले गये और वहीं बस गये। इनके छोटे वैमात्रिक भाई रुद्रधर वा रुद्री भी वहीं रहे। भवानीप्रसाद वा मन्ना मुन्द्रासनमें जा बसे। बिहारी-लालका वंश दो भागोंमें बँट गया। इनके ज्येष्ठ पुत्र गिरिधारी-लालजी लखनऊमें ही रहे, पर कनिष्ठ सुन्दरलालजी पटने चले गये। गिरिधारीलालजीके पुत्र गदाधरजीके दोनो पुत्र त्रियुगी-नारायण और राधेनारायण लखनऊमें ही रहते हैं। राधेनारायण

वैद्य और वेदपाठी हैं। हिन्दी काव्यमें इनकी गति है और ये स्वयं कवि भी हैं। सुन्दरलालजीके दो प्रपौत्र हैं जो पटनेमें नहीं रहते। गोकर्णनाथ भी शाह बिहारीलालके मुनीम नियुक्त होकर पटने चले गये थे और वहीं बस गये थे। पहले रामरत्नजीने अच्छा धन पैदा किया था, पर पीछे यह निकल गया। बाद गोकर्णनाथजीकी अच्छी उन्नति हुई और अपने उत्तराधिकारियोंको कई लाख रुपये छोड़कर इन्होंने शरीर त्याग किया। इनके पुत्र शालग्राम हुए जो मुजफ्फरपुरके राय नन्दीपति महथा बहादुरकी वीरकेश्वरलाल परमेश्वरनारायण कोठीके मुनीम थे। इनके तीन पुत्र जयनारायण, विजयनारायण और जगत्नारायण हुए। जयनारायणजी अपने पिताकी जगह मुनीम हुए। इनके तीन पुत्र हर्षनारायण, विश्वेश्वरनारायण और गोवर्द्धननारायण हुए। तीनों जवानीमें ही परलोकवासी हो गये। हर्षनारायणके एक मात्र पुत्र प्रतापनारायण वा मङ्गलका मद्रासमें देहान्त हो गया, जहाँ हिन्दी प्रचारार्थ वे गये थे। वहाँ असहयोग आन्दोलनमें उनको जेल जाना पड़ा। जेलमें जब अवस्था बहुत शोचनीय हो गयी, तब वे छोड़ दिये गये और बाहर आकर कुछ ही दिन बाद स्वर्गवासी हो गये। अब उनका एक मात्र पुत्र भगवतीनारायण अपने पुत्रादि सहित लखनऊमें बसता है। जयनारायणजीके मध्यम पुत्र विश्वेश्वरनारायण वा नत्थन अपने श्वशुर शुक्ल शम्भुरत्नजीके सम्बन्धसे भगवन्तनगरमें जा बसे। वहीं उनके पुत्र जगदीशनारायणका सपरिवार निवास है।

विजयनारायणके तीन पुत्र प्रेमनारायण (मुल्लर) रामनारायण (दुन्ने) और धर्मनारायण (पुत्तन) हुए। इनमें धर्मनारायण

कानपुरमें रहते हैं। प्रेमनारायण और रामनारायण दोनो जवानीमें ही चल बसे। प्रेमनारायणके तीन पुत्रोंमें कनिष्ठ चतुर्भुजनारायण वर्त्तमान है। मध्यम रूपनारायणका पुत्र कृष्ण-नारायण भी कारोबारसे लगा हुआ है। रामनारायणके पुत्र श्यामनारायण (नैनो) और युगुलनारायणने अपने नाना कलकत्तेके पांडे गौरीशंकरकी सम्पत्तिका आधा भाग पाया है। ये कलकत्तेमें ही रहते हैं। इस प्रकार अब घनश्यामजीके वंशका पटनेमें कोई नहीं है, क्योंकि रामरत्नजीके पौत्र बटुक-नारायणके दोनो पौत्र पितृवियोगके बादसे अपनी ननिहाल शाहजहाँपुरमें रहते हैं।

अब मोहनलालजीके वंशजोंका थोड़ा विवरण और दिया जाता है। ऊपर बताया गया है कि रामचन्द्रजी अच्छे ज्योतिषी थे आर भविष्य जानते थे। उन्होंने गदरके पहले ही अपने छोटे भाई मुकुन्दलालजीसे कहा था कि समय बड़ा विपरीत आ रहा है। शीघ्र ही उलट-पुलट होगा और मेरा भी शरीर न रहेगा। मुझे ऐसा जान पड़ता है कि तुम्हारे द्वारा ही इस कुटुम्बका भरण-पोषण होगा। इसलिये संन्यास न लेना। मुकुन्द-लालजीकी पत्नीका स्वर्गवास उनकी युवावस्थामें ही हो गया था और फिर उन्होंने विवाह नहीं किया था तथा विरक्तसे रहा करते थे। उन्होंने ज्येष्ठ भ्राताकी आज्ञा शिरोधार्य की। लखनऊमें गदरके पहले ही रामचन्द्रजी और उनके दो छोटे भाइयोंने अपनी संसारयात्रा समाप्त कर दी थी; केवल मुकुन्दलालजी और गोविन्दप्रसादजी रह गये थे। गदर हुआ और अंगरेजोंने गोविन्दप्रसादजीको बागी कहकर गिरफ्तार कर लिया। इसका

कारण यह था कि जब भतीजे रघुवरदयालुके ज्येष्ठ पुत्र राधावरजीके ब्याहकी बरात जा रही थी, तब उसपर डाका पड़ा था। डाकुओंकी तलवारसे केदारनाथजीका तो पेट फट जानेसे देहान्त हो गया और गोविन्दप्रसादजीके कन्धे और गालपर तलवारकी चोटें पड़ीं। सम्मुख समरमें मार खायी है ऐसा अनुमान करके अंगरेजोंने इन्हें बागी समझ लिया था। लखनऊके प्रतिष्ठित लोगोंके यह कहनेपर कि 'ये हमारे पादरी हैं, बागी नहीं,' ये छूटे थे।

इस घटनासे कुटुम्बीजनोंपर इतना आतङ्क जमा कि उन्होंने लखनऊसे भाग जाना ही उचित समझा। प्रश्न हुआ कि जायँ कहाँ ? निश्चय किया गया कि कटेसर राजमें चलें, क्योंकि राजा साहब मोहनलालजीके शिष्य हैं; अवश्य ही आश्रय देंगे। इसके सिवा मुन्द्रासनमें अपने भाई भी रहते हैं, इसलिये वहीं चलना ठीक है। इसके अनुसार मोहनलालजीका कुटुम्ब मुन्द्रासन पहुँच गया। पर वहाँ बिशेष सुभीता न हुआ। इसके कई कारण थे। एक तो मुन्द्रासन जंगल ही था। दूसरे मोहनलालजी जब गुरु थे, तब थे, इस समय तो गुरु हरिनाथजी और इनके उत्तराधिकारी थे, इसलिये एक म्यानमें दो तलवारोंकी जगह न थी। स्वभावतः अधिकारच्युत होना कोई पसन्द नहीं करता। तीसरे, शिक्षाकी व्यवस्था न थी। राजनीतिक स्थिति तो अनिश्चित थी ही। वह समय जिनकी शिक्षाका था, उन्हें शिक्षा मिली सही; पर वह रस्सी बटनेकी थी, पढ़ने लिखनेकी नहीं। इस प्रकार मुन्द्रासनमें रहनेके अयोग्य स्थितिका जब ज्ञान लोगोंको हो गया, तब मुकुन्दलालजीकी आज्ञासे गोविन्दप्रसादजी

सारे परिवारको कानपुर ले गये और वहाँ उसे पुराने कानपुरके उस घरमें रख दिया जो सदानन्दजीको उनके कायस्थ शिष्यने दिया था।

सदानन्दजीने भविष्यद्वाणी की थी कि यह घर कभी तुम लोगोंके काम आवेगा। सन् १८५९ वा ६०में इनके उत्तराधिकारी पुराने कानपुर पहुँचे थे। उस समय इनके भतीजोंमें केवल मुकुन्दलालजी और गोविन्दप्रसादजी थे। मुकुन्दलालजी तो अपुत्र रहे, पर शेष चारो भाइयोंके वंश चले। रामचन्द्रजीके दो पुत्र मदनमोहन और कन्दर्पनारायण, केवलकृष्णजीके चार पुत्र रघुवरदयालु, भगवानदत्त, दामोदर और नीलकण्ठ थे। केदारनाथके पुत्र यदुवरदयालुका देहान्त जवानीमें ही हो गया था। इनके पुत्रका नाम था उमावर। गोविन्दप्रसादजीके पुत्रका नाम विनायकप्रसाद था। रघुवरदयालुजीके दो पुत्र थे राधावर और व्रजनाथ। इन सबके जन्म लखनऊमें ही हुए थे। राधावरजीका जन्म सं० १९०५ भाद्र कृ० ४ शुक्रवारको हुआ था और स्वर्गवास पुराने कानपुरमें ही सं० १९६५ में हुआ। भगवान् दत्त और विनायकप्रसादने भी संस्कृतका कुछ अभ्यास किया था। स्थानकी व्यवस्था हो चुकनेके पहले ही मुकुन्दलालजीने कुटुम्बके भरणपोषणके लिये पटनेको प्रस्थान किया। वहाँ गोकर्णनाथजी और रामरत्नजीके सहयोगसे उन्होंने गुड़हट्टा मुहल्लेमें संस्कृत पाठशाला स्थापित कर विद्यार्थियोंको पढ़ाना आरम्भ किया। वे आप षट्शास्त्री थे और उनके बड़े भतीजे रघुवरदयालुजी भी पण्डित हो चुके थे। इनको उन्होंने पाठशालामें हिन्दी पढ़ानेका काम दिया। पटनेके धनी साहूकारों

और कोठीवालोंके चन्देसे यह पाठशाला चलती थी। इसमें विद्यार्थियोंको भोजन भी मिलता था। बलियाके बाबूराम पण्डित भी इसमें शिक्षा पाकर अध्यापक नियुक्त हुए थे। मुकुन्दलालजीने अपने लड़कोंकी शिक्षाकी भी व्यवस्था की। मदनमोहनजी और दामोदरजीको पढ़ने काशी भेजा। कन्दर्प-नारायण, राधावर और उमावरको हिन्दी मिडिल पास कराया और राधावर और उमावरको इसके बाद संस्कृत भी पढाया तथा राधावरको पण्डित बना दिया। मदनमोहनजीके दोनो पुत्रों—शङ्करदत्त और हरिप्रसाद तथा राधावरजीके पुत्र शिवप्रसादको शिक्षाकी भी व्यवस्था की। इन सबके जन्म कानपुरमें ही हुए थे। इनमें केवल शङ्करदत्तने ही हिन्दी मिडिल पास किया। किसीको धर्मभ्रष्ट होनेके डरसे अँगरेजी शिक्षा नहीं दिलायी गयी।

६५ वर्षकी अवस्थामें मुकुन्दलालजी पाठशालाके सञ्चालनसे अलग होकर काशीवासको चले गये और अपना स्थान रघुवर-दयालुजीको दे गये। हिन्दी पढ़ानेका काम उमावरजीको सौंपा गया। सन् १८८१ सं० १९३७ में काशीमें उनका परलोकवास हुआ। फिर कालान्तरमें जब काशीवासके लिये रघुवरदयालुजी निकले, तब उनकी गद्दी राधावरजीने सम्हाली। इनके समयमें ज्योतिष पढ़ानेका काम दामोदरजी करते थे। हिन्दी वर्ग पहले ही उठा दिये गये थे। पाठशालाकी आयमें भी कमी हो गयी थी, परन्तु राधावरजीने अन्तिम समयतक पाठशालाका कार्य चलाया और इस प्रकार इनके देहान्तके वाद हमारे वंशसे उसका नाता टूट गया। राधावरजीके पुत्र शिवप्रसाद संस्कृत

नहीं पढ़े थे और अपने पितासे पहले ही स्वर्गवासी हो चुके थे। मोहनलालजीके वंशमें संस्कृतके पाण्डित्यका अन्त राधावरजीके स्वर्गवाससे ही हो गया।

सन् १८७२ में मदनमोहनजी काशीके क्वीन्स कालेजमें भर्ती हुए और ६ वर्षोंमें उन्होंने व्याकरणमें सिद्धान्त कौमुदी, मनोरमा और परिभाषेन्दु शेखर, काव्यमें काव्यषट्क, सांख्यमें तत्त्वकौमुदी, धर्मशास्त्रमें मनुस्मृति और मिताक्षरा, नाटकमें उत्तररामचरित्र तथा अलङ्कारमें कुवलयानन्द पढ़कर उत्तमा परीक्षा दी। ६ फरवरी १८७८को कालेजके प्रिन्सिपल आर० ग्रिफिथ तथा पं० बेचनराम शर्मा, पं० शीतलाप्रसाद शर्मा, पं० श्रीबस्तीराम शर्मा, बापूदेव शास्त्री, बाल शास्त्री, कालीप्रसाद शर्मा और देवकृष्ण शर्माके हस्ताक्षरोंसे उन्हें सर्टिफिकेट मिला, जिसमें वे अध्यापन करने योग्य ठहराये गये। इसके बाद २० वर्षोंतक उन्होंने पटनेके मुहम्मडन स्कूलमें संस्कृत पण्डितका काम किया और सन् १८९८ में जेठके महीनेमें उनका पुराने कानपुरमें ही स्वर्गवास हुआ। उनके ज्येष्ठ पुत्र शङ्करदत्तजी अपुत्र रहे। इनका शरीरान्त कलकत्तेमें सन् १९३९ में हुआ। कनिष्ठ पुत्र हरिप्रसादका जवानीमें ही पुराने कानपुरमें देहान्त हो गया था। इनके पुत्र भुवनेश्वरकी मृत्यु भी जवानीमें ही मेदिनीपुर जिलेके धामसाही गाँवमें हुई। भुवनेश्वरके उत्तराधिकारीका नाम योगेश्वर है, जो धामसाहीमें अपने पुत्रादि सहित है।

कन्दर्पनारायणजीका जन्म श्रावण सं० १९०१में लखनऊमें हुआ था। इनकी शिक्षामें राजनीतिक उलट-पलटके कारण बड़ा व्याघात पड़ा। लखनऊमें ही इन्होंने कौमुदी आरम्भ की थी

और क़ुदन्ततक पहुँचे ही थे कि गदर ही नहीं हुआ, लखनऊसे भी भागना पड़ा। पटनेमें हिन्दी मिडिल पास कर चुकनेपर इनके चाचा मुकुन्दलालजीने विचारा कि यदि इन्हें संस्कृत पढ़ाते हैं, तो इसके लिये बहुत समय चाहिये और अवस्था अधिक हो गयी है। अर्थोपार्जनका समय विद्यार्जनमें ही लग जायगा, इसलिये इन्हें महाजनी बहीखातेकी शिक्षाके लिये गोकर्णनाथजीके सुपुर्द किया। जब इस कार्यमें ये दक्ष हो गये, तब २६वें वर्षमें कलकत्तेमें चतुर्भुजनारायण गोविंदनारायणकी कोठीमें महाजनी बहीखाता लिखनेके लिये गुमाश्ता नियुक्त किये गये। यह गद्दी मुजफ्फरपुरके प्रसिद्ध धनी राय नन्दीपति महथा बहादुरकी थी, जिनकी पटनेकी कोठीमें गोकर्णनाथजीके सुपुत्र शालग्रामजी मुनीम थे। कुछ दिनों गुमाश्तगरी करनेके बाद वे नमककी दलाली करने लगे।

उन दिनों लिवरपूल, पोर्टसईद, अदन आदिसे कलकत्तेमें नमक आता था और बिहारमें भेजा जाता था। दलालका काम कस्टम्स हाउसमें ड्यूटी जमाकर वहाँसे परमिट वा रवन्ना लेकर नमक गोलेसे नमक वजन कराके जहाज या रेलपर चालान कराना था। ड्यूटी तो आप जमा करनी पड़ती थी और बाकी काम दलालके जमादार और मुटिये किया करते थे। इस काममें फी बोरे जो रकम दलालको दाम और ड्यूटी देकर बचती थी, उनसे कई सौ रुपये महीनेकी आय हो जाती थी। वे कोठीमें ही रहते थे, जिसके लिये उन्हें भाड़ा नहीं देना पड़ता था और चूँकि शालग्रामजीके सुपुत्र जयनारायणजी और विजयनारायणजीके वे चाचा थे, इसलिये कोठियोंके मालिक बाबू

रामेश्वरनारायण और बाबू परमेश्वरनारायण भी उन्हें चाचा ही कहते थे। इस प्रकार वे कलकत्तेमें चाचा प्रसिद्ध हुए और कोठीके कर्मचारी ही नहीं, हिन्दू, मुसलमान, पारसी, यहूदी आदि जो भी सम्पर्कमें आते थे, सभी उनको चाचा कहते थे।

कन्दर्पनारायणजीके दो पुत्र हुए। ज्येष्ठका जन्म सं० १९३४ को ज्येष्ठाके मूलमें होनेके कारण मूलनारायण नाम रखा गया। कनिष्ठका जन्म पौष कृ० १४ सं० १९३७ को हुआ और नाम रखा गया अम्बिकाप्रसाद। दोनो भाइयोंकी शिक्षा पुराने कानपुरमें ही पहले घरपर कुटुम्बके अन्य लड़कों—हजारी लाल, देवीप्रसाद और रमानाथके साथ हुई। सबको उर्दू फारसी पढ़ायी गयी। कई वर्षोंके बाद अंगरेजी शुरू करायी गयी। उमावरजीको शिक्षाकार्यका कुछ अनुभव था, क्योंकि कई वर्ष उन्होंने गुड़हट्टा पाठशालामें हिन्दी पढ़ायी थी। इन्होंने ४ अक्तूबर १८८९ को ब्राह्मण स्कूल नामसे अंगरेजी पढ़ानेके लिये स्कूल स्थापित किया। कुछ समयतक सबके साथ दोनो भाई इसमें पढ़ते रहे। बादको कुछ समय काशीके हरिश्चन्द्र एडेड स्कूलमें पढ़े। फिर दो वर्ष कलकत्तेमें पहले आर्यमिशन इन्सटिट्यूशन और फिर हेयर स्कूलमें पढ़कर कानपुर लौट गये और वहाँ जिला स्कूलमें भर्ती हुए। मूलनारायणजीने १८९६ तक ही पढ़ा और चौथे (वर्त्तमान सातवें) दर्जेसे आगे नहीं बढ़े। अनन्तर वे कलकत्ते चले गये, जहाँ पहले उन्होंने एक फ्रेंच बैंक क्रेडिट लियोनेमें काम किया और इसके उठ जानेपर आगरा बैंकमें मुंशी नियुक्त हुए। सन् १९०० की फाल्गुन शु० ८ को हैजेसे कलकत्तेमें ही इनका देहान्त हो गया। इनके

एकमात्र पुत्र प्रतापनारायणने बी० ए० तक शिक्षा पायी है और कलकत्तेमें शेयरके काममें संलग्न हैं। वहीं सपरिवार इनका निवास भी है। इनके ज्येष्ठ पुत्र प्रेमनारायणने बी० काम० पास किया है।

अम्बिकाप्रसादने १९०० के जनवरी महीनेमें इनट्रैन्स परीक्षा पास की। पर इसके बाद ही माता और ज्येष्ठ भ्राताके स्वर्गवाससे आगे पढ़ाई रुक गयी। यह त्रुटि पूरी करनेके लिये इनका स्वाध्याय चलता रहता है। १९०२ में कलकत्ते पहुँचकर इन्होंने १ अप्रैल १९०२ से ३१ मार्च १९०५ तक इलाहाबाद बैंकमें काम किया। इसके उपरांत कई महीने इधर-उधर कुछ काम करके शिवबिहारीलालजी बाजपेयीके सिलसिलेसे अक्तूबरमें 'हिन्दी-बङ्गवासी' में प्रवेश किया। यह काम एक वर्षके अन्दर ही छोड़कर फिर दूसरे काममें लगे। पर वह प्रवृत्तिके अनुकूल नहीं था। १९०७ में इन्होंने राजनीतिक मासिकपत्र 'नृसिंह' निकाला और एक वर्ष चलाया। १९०९ में बङ्गाल नेशनल कौंसिल आव एज्युकेशनके नेशनल कालेजमें हिंदी अध्यापकका काम किया। १९१० में इसे छोड़ दिया और १९११ के जनवरीमें 'भारतमित्र' के सम्पादक नियुक्त हुए। इस पदपर १९१९ के जूलाईतक रहे। इस बीचमें इन्होंने 'भारतमित्र' को दैनिक किया और कई वर्षोंतक चलाया। 'भारतमित्र' ही हिन्दी दैनिकोंका अग्रदूत हुआ। स्वास्थ्य बिगड़ जानेके कारण अगस्त १९१९ के आरम्भमें इन्होंने भारतमित्र छोड़ दिया, पर १९२० को जन्माष्टमीको नया पत्र 'स्वतंत्र' निकाल दिया। 'स्वतंत्र' बड़े धूमधामसे चला। अंतको बङ्गाल सरकारने ५०००) की

जमानत माँगकर इसे १९३० में बंद कराया। इसका पुनर्जन्म भी हुआ, परंतु यह बहुत समयतक जीवित न रह सका। इसके बाद किसी पत्रके सम्पादनसे अम्बिकाप्रसादका सम्बंध नहीं रहा।

१९२८ में कलकत्ता विश्वविद्यालयने इनको मैट्रिक परीक्षाका हिंदी परीक्षक बनाया। १९३० में ये आई० ए० और एम० ए० परीक्षाओंके हिंदी परीक्षक नियुक्त हुए। तबसे बराबर आई० ए०, बी० ए० और एम० ए० परीक्षाओंके परीक्षक होते हैं। १९३९ में ये हिंदी-साहित्य-सम्मेलनके काशी अधिवेशनके सभापति निर्वाचित हुए थे और १९४० के पूना अधिवेशनमें सभापति श्रीसम्पूर्णानन्दजीकी अनुपस्थितिके कारण दो दिनतक सभापतिका कार्य संचालन किया था। इसी वर्ष बड़ा बजारके कई मित्रोंने आग्रहपूर्वक इन्हें २०१) की थैली सहित मानपत्र दिया। १९४४ में कानपुरमें हिन्दी पत्रकारोंका जो अखिल भारतीय सम्मेलन हुआ था, इसका सभापतित्व भी इन्हींने किया था। १९४१ के दिसम्बरमें जापानकी युद्धघोषणासे कलकत्तेकी स्थिति सङ्कटपूर्ण समझ अम्बिकाप्रसाद सपरिवार काशी चले आये और तबसे यहीं हैं। १९४३ के दिसम्बरमें यहीं इनकी पत्नीका स्वर्गवास हो गया। इससे स्वास्थ्य, जो पहलेसे ही गड़बड़ था और भी बिगड़ गया। निरंतर दो वर्षोंसे चिकित्सासे कुछ लाभ न देखकर अंतमें स्वास्थ्यसुधार के लिये ये १५ जून १९४५ को कलकत्ते गये। वहाँ रायसाहब डा० प्रबोधचन्द्रराय और डा० जे० एम० दासगुप्तकी सुचिकित्सासे स्वास्थ्योन्नति हुई। इसी बीचमें कलकत्तेके मित्रों-ने ९ अगस्तके दिन श्रीविशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालयके

हालमें बड़े समारोहसे इनका अभिनन्दन किया, जिसमें मानपत्र ही नहीं, ११११) को थैली भी दी। इसके बाद अभिनन्दन समितिके खर्चसे बचे हुए २१३॥=) भी इनके पास भेज दिये। इन्होंने थैली स्वीकार करते हुए कहा कि इसका उपयोग निज कामोंमें न किया जायगा; परन्तु सदुपयोग अवश्य किया जायगा।

अम्बिकाप्रसाद राजनीतिमें लो० तिलकके अनुयायी हैं, पर गान्धीजीके विरोधी नहीं, यह इससे स्पष्ट है कि १९३० के असहयोग आन्दोलनके समर्थनमें ही इनका 'स्वतंत्र' बन्द हुआ था। परन्तु इन्हें इसका दुःख नहीं है, क्योंकि इनका सिद्धान्त है कि निर्जीव पत्रके जीते रहनेसे जानदार पत्रका थोड़े दिन जीना भी अच्छा है। १९१६ तक तो ये केवल पत्रकार ही थे, पर इस वर्षसे इन्होंने राजनीतिक आन्दोलनमें सक्रिय भाग लेना आरम्भ किया। १९१६ में तिलक होमरूल लीग वा स्वराज्य संघकी शाखा इन्होंने बड़ा बाजारमें स्थापित की थी, जिसकी ओरसे कांग्रेस-लीग स्कीम लोगोंमें प्रचार करनेके लिये भाष्य सहित प्रकाशित की गयी थी और लो० तिलकको विलायतमें आन्दोलन करनेके लिये १० हजार रुपये १९१८ में भेजे गये थे। १९१७-१८ में स्वर्गीय बाबू विपिनचन्द्रपालके सहयोगसे कलकत्तेके विभिन्न स्थानोंमें स्वराज्यका आन्दोलन भी चलाया था। ये १९१७ को कलकत्ता कांग्रेसकी स्वागत समितिके उपाध्यक्ष भी चुने गये थे और कई वर्षों तक आलइंडिया कांग्रेस कमिटीके मेम्बर भी रहे थे। लोकमान्यके संकेतसे १९१८ में तिलक स्वराज्य संघके ये उपाध्यक्ष भी चुने गये थे। १९२१

अभिनन्दन-समितिके खर्चसे बचे हुए २१३।।।=) भी उनके पास भेज दिये गये। उन्होंने थैली स्वीकार करते हुए कहा कि इसका उपयोग निज कामोंमें न किया जायगा; परन्तु अन्य कामोंमें सदुपयोग किया जायगा।

अम्बिकाप्रसाद राजनीतिमें लो० तिलकके अनुयायी हैं, पर गांधीजीके विरोधी नहीं। यह इससे स्पष्ट है कि सन् १९३० के असहयोग आन्दोलनके समर्थनमें ही उनका 'स्वतंत्र' बन्द हुआ था। परन्तु उन्हें इसका दुःख नहीं है, क्योंकि उनका सिद्धान्त है कि निर्जीव पत्रके जीते रहनेसे जानदार पत्रका थोड़े दिन जीना भी अच्छा है। १९१६ तक तो वे केवल पत्रकार ही थे, पर इस वर्षसे उन्होंने राजनीतिक आन्दोलनमें सक्रिय भाग लेना आरम्भ किया। १९१६ में तिलक होमरूल लीग वा स्वराज्य संघकी शाखा उन्होंने बड़ा बाजारमें स्थापित की थी, जिसकी ओरसे कांग्रेस-लीग स्कीम लोगोंमें प्रचार करनेके लिये व्याख्यासहित प्रकाशित की गयी थी और लो० तिलकको विलायतमें आन्दोलन करनेके लिये १० हजार रुपये १९१८ में भेजे गये थे। अम्बिकाप्रसादने १९१७-१८ में स्वर्गीय बाबू विपिन-चन्द्र पालके सहयोगसे कलकत्तेके विभिन्न स्थानोंमें स्वराज्यका आन्दोलन भी चलाया था। १९१७ की कलकत्ता कांग्रेसकी स्वागतसमितिके वे उपाध्यक्ष चुने गये थे और कई वर्षोंतक आल इण्डिया कांग्रेस कमिटीके मेम्बर भी रहे थे। लोकमान्यके संकेतसे १९१८ में तिलक स्वराज्यसंघके वे उपाध्यक्ष भी चुने गये थे। सन् १९२१ में असहयोग आन्दोलनमें देशबन्धु सी० आर० दास, मौ० आजाद और नेताजी सुभाषचन्द्र बसु

आदिके साथ वे भी गिरफ्तार हुए थे और एक महीनेतक प्रेसिडेन्सी जेलमें उन्होंके साथ और चार महीनेतक सेंट्रल जेलमें रहे।

१९१३ में नागपुरमें जो कान्यकुब्ज सम्मेलन हुआ था, तथा १९३० में जो कान्यकुब्ज सम्मेलन कानपुरमें हुआ था, दोनोमें वे सभापति थे। उन्होंने विविध विषयोंपर अनेक पुस्तकें भी लिखी हैं, जिनमेंसे एकको, जो अंगरेजोमें है, कलकत्ता विश्वविद्यालयने तथा दोको हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनने प्रकाशित किया है।

अम्बिकाप्रसादके दो पत्नियोंसे पाँच पुत्र हुए। बड़ीसे एक तेजनारायण और छोटीसे चार फणीन्द्रनारायण, क्षेमेन्द्रनारायण, उपेन्द्रनारायण और रामेन्द्रनारायण। तेजनारायणकी पढ़ने-लिखनेमें रुचि बहुत कम थी, पर गांधी आन्दोलनका उसपर अच्छा प्रभाव पड़ा था। वह तीन बार जेल गया था और दो बार तो एक एक साल रहा भी था। उसने १९२८ में 'स्वतंत्र भारत' नामका साप्ताहिक पत्र निकाला था, जिसे नौकरशाहीकी नादिरशाहीसे जुलाई १९४४ में बन्द होना पड़ा। १९४१ में ३७ वर्षकी आयुमें कलकत्तेमें ही उसका शरीरान्त हो गया। फणीन्द्रनारायण और क्षेमेन्द्रनारायणने आई० ए० तक शिक्षा पायी और उपेन्द्रनारायणने एम० ए० (प्रथम वर्ष) तक पढ़ा। फणीन्द्रनारायण दिल्लीमें समाचारपत्रोंका प्रतिनिधि है। इसकी वर्त्तमान पत्नी मैट्रिक पास है उपेन्द्रनारायणको १९४२ के आन्दोलनके फलस्वरूप ३॥ वर्ष जेलमें बिताने पड़े। रामेन्द्रनारायण अभी बालक है।

विनायकप्रसाजीके छोटे भाई शिवदत्त थे, जो अपुत्र रहे। विनायकप्रसादजीकी ज्येष्ठ पत्नीसे एक पुत्र देवीप्रसाद हुए और कनिष्ठपत्नीके पुत्रका नाम जगदीशनारायण वा जगदेव है। पोस्ट-मास्टर जगदीशनारायणके ज्येष्ठपुत्र भवनाथने ए० ए० पास किया है। इसकी पत्नी बी० एससी० पास है। दूसरे पुत्र जितेन्द्र-नाथने भी बी० ए० पास कर लिया है। देवीप्रसादजी अपने पुत्र शम्भुनाथ आदि सहित पुराने कानपुरमें रहते हैं और वहीं जगदीशनारायणका भी निवास है। भगवान्दत्तजीके दो पुत्र शिवदयालु और हजारीलाल हुए। शिवदयालुके पुत्रका नाम संकटाप्रसाद (मैकूलाल) और हजारीलालके पुत्रका नाम ब्रह्म-दत्त है। दोनो सपरिवार काशीमें रहते हैं। उमावरजीके पुत्र रत्नेश्वर कानपुर शहरमें रहने लगे थे और वहीं इनके दोनो पुत्र सपरिवार रहते हैं।

नोट—पटनेके सुन्दरलालजीके पुत्र श्रीनारायण (झुनकू) हुए, जिनके दो पुत्र मुरारी और लल्ला थे। मुरारी काव्यतीर्थ और इनट्रैन्स परीक्षा पास थे। लल्ला षट्शास्त्री थे, पर दोनो जवानीमें ही परलोकवासी हो गये। दोनोंके पुत्रादि हैं। झुनकूजीने इन्हें ले जाकर कानपुर जिलेके भीतरगाँवमें रख दिया था, जहाँ पांडे देवतादीनको सम्पत्ति मुरारीके लड़केको मिली थी। इस प्रकार घनश्यामजीके वंशसे पटना शून्य हो गया।

॥ श्रीः ॥

उपमन्यु ऋषि
औपमन्यव, प्राचीनशाल
देवद्विज
आन्यव
पिप्पल
नीरन्ध्र
अंशुमान्
विद्युत्
अब्ज
मिहिर
प्रजापति
विश्वेश
विभव
पुण्डरीकाक्ष
दुर्धर्ष
मानव

- मानव
  - ऐलास
    - अद्वैत
      - गुण
        - क्षमा
          - निर्द
            - विल्व
              - निधि
                - पर्वत
                  - क्षत्र
                    - शुनक
                      - सुबाल
                        - देव
                          - भास्कर
                            - रत्न
                      - मुद्गर
                        - नाथ
                      - जनक
                      - धराधर
                  - महेश
                  - कुन्तल
          - धाता
          - इलंजित्
          - कमल
          - भास्कर
          - सुत्रामा
  - वज्र

मन
मोह
उल्लास
ब्रह्म
अनिल
हरिमुनि
हीरा
भरद्वाज
गणेश
मित्र
संजीव
बल
महाबल
शक्ति
पीवर
सीतापति
जन्तु
महाद्युति
सुषेण
सुपूर्व
रवि
केशव
भरत
कुमार
हलधर
सागर
कोलाहल
सुख
गौरीपति
शिवनाथ
सुभुज
यविष्ट
नियम
कुशल
शेन
गुरु
शिक्षक
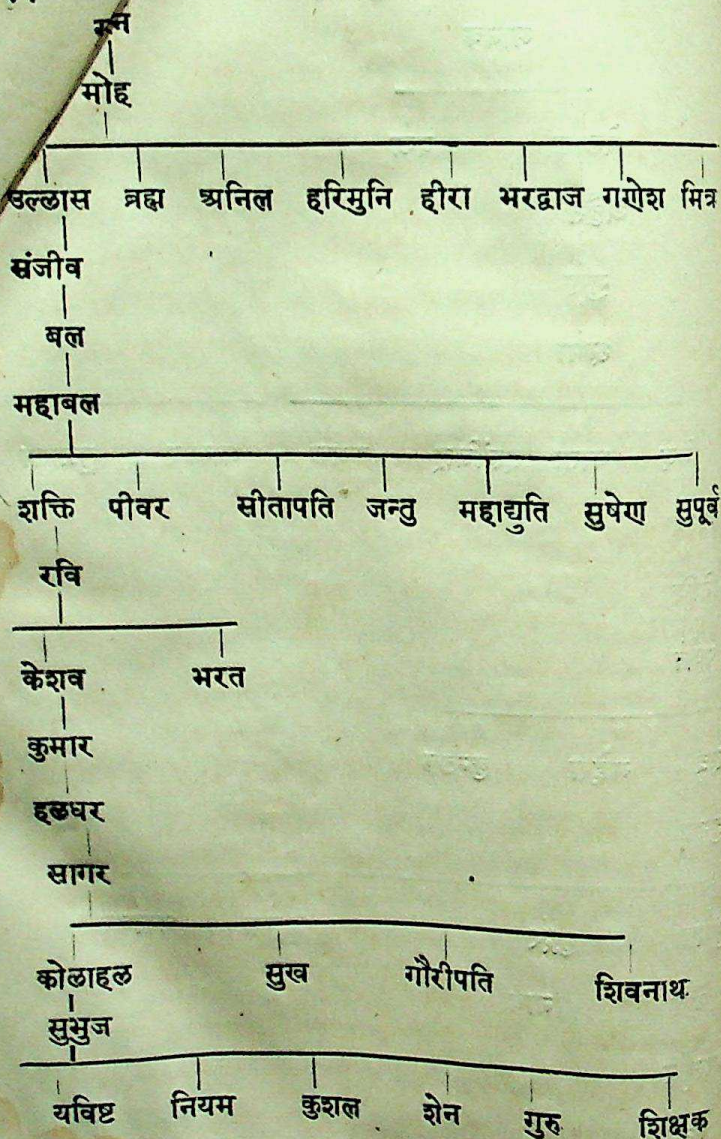
यविष्ठ
गोविन्द
हरि
आनन्द
मानस
शान्त
दुर्लभ
द्वन्द्व
उग्र
दुराधर्ष
गंगा
अम्बर
विलास
देव
शिव
गोवर्द्धन
चन्द्र
नीहार
वंशद
महागुण्य
दयालु
दीक्षित
अग्नि
काशीपति
नारायण
भूधर
भव
संयम
धनद

धनद
पीताम्बर
नल पुरु पुरुजित्
कुल
मारुत
विद्याधर आह्लाद प्रह्लाद
लक्ष्मण
शुक
अनिरुद्ध धीर
शङ्ख
सङ्कर्षण
दिवि
देवदत्त
चिन्तामणि अचल सुकर्मा महासुख अनिरुद्ध शन्तनु
शम्भु
शुभ संयम श्याम

शुभ
तरणि
ईश
दुर्लभ
गौतम
शिवराम
शुचि
विष्णु
अर्जुन
कुन्द
ब्रह्म
यज्ञ
मरुत्वान्
लोमश
कारुण
धुर
मेधा
शैल
निरंजन
पंचानन
वासव
निशाकर
गुणनिधि
दिनेश
उर्वी
क्षपाकर
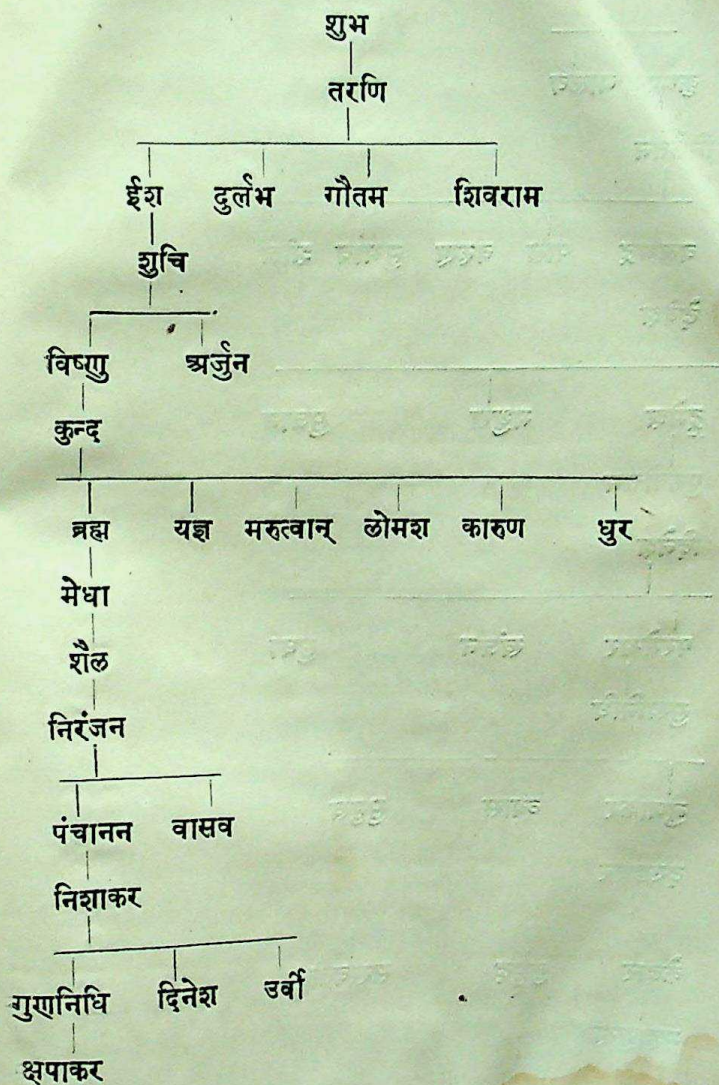
क्षपाकर
कृष्ण गालव
निकेतन
बलभद्र पाल वरुण सुभाव शील
देवेश
द्रुमेश मथुरा सुजान
पुरुषोत्तम
दिनेश
परमेश्वर खंजन सुधा
सुखनिधि
गुणाकर व्यास सुमुख
दण्डधर
केदार कुमुद सरस्वती
महागुण

महागुण
हरिवंश
राम
द्वारिकानाथ
सभापति
दुर्ग
कश्यप
हरि
दीनानाथ
ध्रुव
करुणाकर
सिद्ध
सुखानन्द
लक्ष्मी
उद्यम
हरिकेश (हरिवंश)
सोमदत्त
सोमनाथ
रघु
दमन
निमिष
एकदंत
नृसिंह
मणि
दुर्वासा
कुतूहल
दीर्घायु
इन्द्र
मंगल
शेष
शीतांशु

इन्द्र
माधव
अश्विनी
शिवदत्त
धर्मदत्त
शिवशर्म
नित्यानन्द
बुद्धिनाथ
दयानिधि
बलभद्र
नग
माहेश्वर
बलभंजन
दामोदर
महाभाग
चन्द्रावतंस
गोपाल
अयोध्यानाथ
धुरन्धर
मुकुन्द
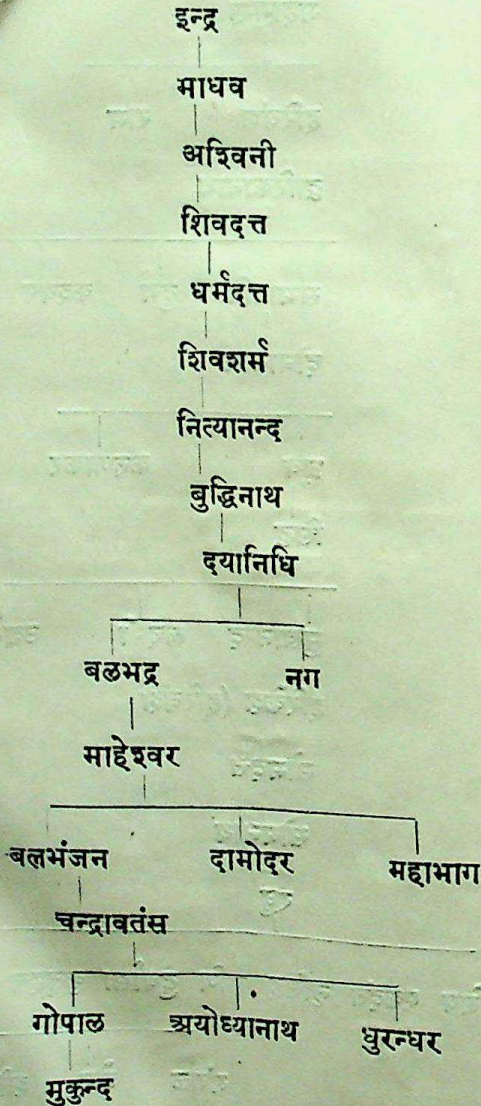
मुकुन्द

विक्रम श्रीधर सम कान्त

हर्षण

ऋषि

गोपीवल्लभ दक्ष यज्ञाधीश

महारुद्र दीक्षित (सोमयाजी) विश्वेश हरिशंकर

विद्रुम परमानन्द

शारद

सुकेश

अमर दीक्षित

वाण अग्निहोत्री

कल्याण

सुदेश

त्रिलोचन दीक्षित

पतञ्जलि अग्निहोत्री

पतञ्जलि अग्निहोत्री
|
अब्ज
|
जलाधीश
|
लक्ष्मीकान्त
|
गुणाकर दीक्षित
|
भीम दीक्षित
|
सुखानन्द दीक्षित

धर्मदत्त दीक्षित — प्रसाद

धर्मदत्त दीक्षित
|
भानुदत्त अग्निहोत्री
|
कुशेश अग्निहोत्री
|
हरिभुज अग्निहोत्री
|
चतुर्भुज अग्निहोत्री
|
पितृसेवक अग्निहोत्री
|
विकास अग्निहोत्री
|
सन्धान
|
विवस्वान्

विवस्वान्
|
भुजबल दीक्षित
|
जगदानन्द अग्निहोत्री
|
जटाशंकर दीक्षित
|
विद्याधर दीक्षित
|
पाकशासन दीक्षित
|
देवेश्वर दीक्षित
|
भूपति दीक्षित
|
दुर्गपति दीक्षित
|
सत्य अग्निहोत्री
|
भाग्यवन्त
|
उद्यम

महामना | सुमुख त्रिवेदी | दुर्बल पाठक | शुचि द्विवेदी

महामना
|
प्रकाश
|
भूधर
|
पूर्ण अग्निहोत्री दीक्षित
|
गंगाधर दीक्षित

गंगाधर दीक्षित

मदन

रत्नाकर दीक्षित

वेणीदत्त दीक्षित

जाना दीक्षित-पाठक

नेमिदेव (नमऊ)　　गदाधर

गोपी वा गोपिनाथ (आवसथ्य करनेसे (अवस्थी हुए।)

अनिरुद्ध गोविन्द पद्मनाभ बिट्टू (ये बैजुआमऊ और नसुराग्राममें रहे और जानापुरी पाठक कहाये।)

नान्हू भट्टू गोशल कवर शंकू रजऊ कर्णू विद्याधर कामदेव

दिवाकर　　कुशनू　　नगई आदि (राजासे ब्रह्म पदवी पायी।)

लोल　　पराशर (जाजमऊमें बसे।)

रविदास अर्चित (पुत्रादि रत्नपुर और अध्वर्युपुरमें रहे।) होरिल कीश जनक
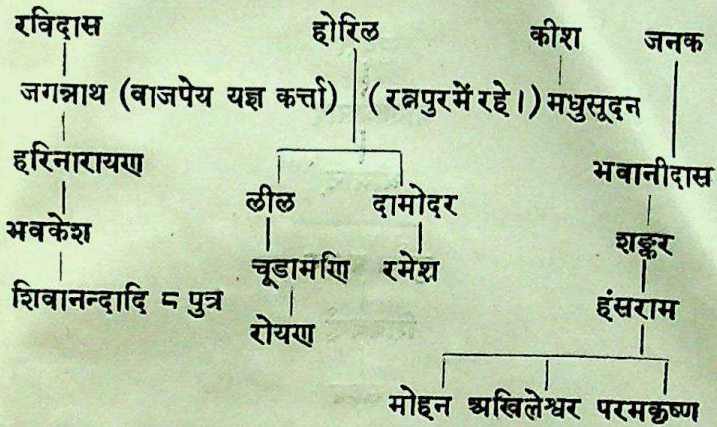
वेणु

पयोधर

वसन्त

भार्गव

जगनेश्वर

मुरलीधर

जानकीनाथ

सुवंश

सुवंश
|
वाणीप्रसाद
|
श्रीमान्

दुर्बल पाठक
|
शिववर्ण
|
सव्य
|
रूप
|
पावन
|
वंशीधर
|
हरिराम
|
दयासिन्धु
|
सीताराम
|
विश्वनाथ
|
समाधान
|
कमल
|
सत्यसिन्धु

शुचि द्विवेदी

गदाधर

गिरिधर कवि

सुधाकर

जगन्नाथ

देवनाथ

ऋषिनाथ

निश्चल

मानधर

अयोध्यानाथ

विहारी

मित्रानन्द

प्रभाकर

गोपीनाथके पुत्र

- कवर
  - घाटम
    - सुरेश्वर
    - जौन
      - देवदास आदि (मलवामें बसे)
    - केदार
    - कर्मणि
    - लक्ष्मण
      - देवशर्मा
      - खेमकर्ण
        - बुद्धि
          - नारायण
          - जयराम
            - खेचर
              - चक्रपाणि
                - आदिशर्मा
                - त्रिलोक
              - मार्कण्डेय
                - सूर्य
                - हेम
              - पुखई
                - केशव दैवज्ञ
                  - नरहरि
          - तुला
      - खेचर
      - (तीनों सांडीमें बसे।)
    - भैरव
      - जयानन्द आदि (सांडीमें बसे)
    - खर्ग
    - आनन्द
      - हर्ष
        - हरिश्चन्द्र
          - रघुनाथ (मलवामें बसे)
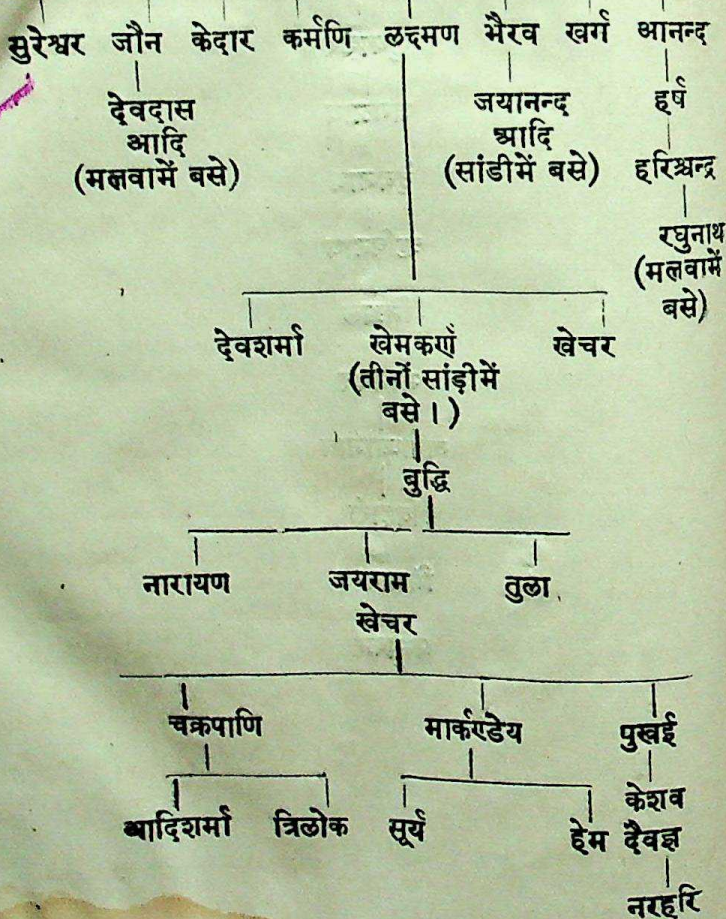
सुरेश्वर

देवर्षि	पीताम्बर	हरिहर	खेम	विश्वरूप	मकरन्द
(त्योरासीमें)	(डोमनपुरमें)	(डलमऊ)	(लखनऊ)	(परियरमें)	(ब्रह्मावर्त ख्यौरामें)

(घाटमके ही आठो पुत्र अठभैया अवस्थी ब्रह्मदत्तके नामसे प्रसिद्ध हुए। ब्रह्मदत्त घाटमके चाचा गोशलके सुप्रसिद्ध पुत्र थे।)
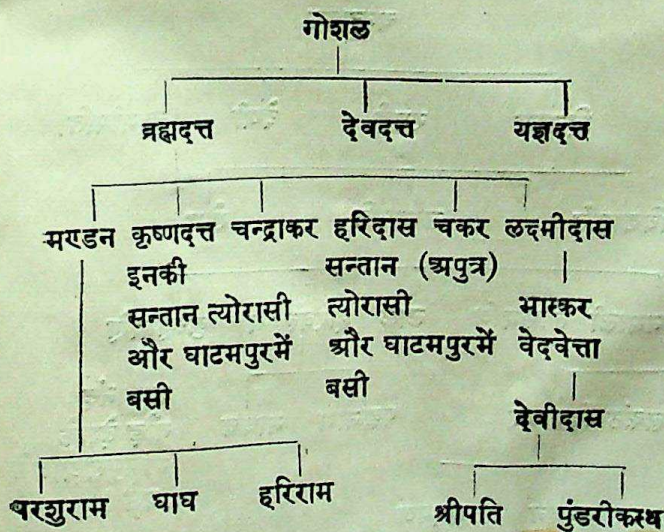
परशुराम
हरिराम
रामचन्द्र
जनार्दन
केशव (धनवान हुए)
वासू
गंगा
मान
रमणू
स्वर्गू
लक्ष्मण
(भाई सहित
उड़ीसे में बसे)
रविदास
छंगऊ
(बरी नगरीमें बसे)
लाल
गुलाल
चन्द्राकर
दिनकर
रमई
वेणी
लक्ष्मीपति
विद्यापति
सभापति
खेम
वनमाली
लोकमणि
लाल
हरिवल्लभ
कृष्णमणि
नीलकंठ
दिवाकर
पद्मनाभ
माधव
परमानंद
गौड़ देशके
मलिपुरा ग्राममें
बसे ।
बन्धन
लक्ष्मण

सभापति
भगीरथ
हरिशंकर
(वंशावलीकार)
कमलाकर
चतुर्भुज
अनिरुद्ध
रत्नेश्वर
खेम
मकरन्द
मधुसूदन
कल्याण
दामोदर
केशव
शिवराम
रामभद्र
सर्वेश
जगदीश
लक्ष्मीकान्त
बीरू
गंगाधर
तुला
सीतापति
धराधर
प्राणनाथ
चन्द्राकरके पुत्र
रमई
हरी
हिरऊ
शंकर
उर्वीधर
ये चारो भाई बरी वा बरियामें बसे।
दिनमणि
गंगा
यशन
मद्धा
बीशा
ये पाँचो प्रसिद्ध वैदिक हुए।

- हिरऊ
  - तारापति
    - शिवराम (वैष्णव थे)
    - हरिनारायण
  - उदीच
  - कितऊ

- शङ्कर
  - जगदीश
  - खिमानन्द
  - रघुनाथ

ये राजपूजित थे ।

- उर्वीधर
  - श्रीराम
  - रमई

चन्द्राकर के पुत्र

- वेणी
  - रत्नाकर
    - चूड़ामणि
      - जनार्दन
      - शुकदेव
  - चन्दन
    - वलन
    - खगन
      - घनराम
      - अग्निचित्

चन्द्राकरके पुत्र

लक्ष्मीपति बालकपनमें ही मर गये ।

देवदत्तके पुत्र
अमर

रामदास लक्ष्मीकर

रामदास
लक्ष्मीकर
कृष्णभद्र
जगन
हेमकर
शङ्कर
श्रीकान्त हर्ष सारंग
(ब्रह्मवर्त्त-भद्रसमें
इनके पुत्रादि बसे)
लोकमणि गोपाल जगत्
(ये पुरैनिया ग्राममें बसे ।)
गंगा जगनहृदय रामकृष्ण बबुआ
देवदत्तके पुत्र
अनिरुद्ध
गणेश महेश महादेव आशानन्द पद्मनाभ भवानीदास
(ये तीनो अपुत्र रहे ।)
जगदीश
(बिहटामें सुपुत्र बसे ।)
कदर
(दरिया-
बादमें
बसे ।)
कन्दन रामदत्त कमलापति
मधुराम
(रौतापुरमें
बसे ।)
ढोढन बल कला दमा
उत्पलारण्य इटावेमें एकडला
और बिहटामें बसे ग्राममें बसे ।
बसे
जयदेव देवमणि
सुन्दर परमू (कटीली ग्राममें बसे ।)

कवि गोशलके पुत्र
याज्ञिक यज्ञदत्त दीक्षित
संन्यास लेकर अनुभूति स्वरूपाचार्य प्रसिद्ध हुए।

महाशर्म वाजपेय यज्ञकर्त्ता
विष्णुशर्म वाजपेय यज्ञकर्त्ता स्वराट् सम्राट् कहाये।

महाशर्म के पुत्र:
जयशर्म हरिब्रह्मा गदाधर

जयशर्म → देवराम → कुलमणि सोमयाजी

कुलमणि सोमयाजी के पुत्र:
काशीराम मणीराम गोपीनाथ मथुरापति

प्राणमणि चूड़ामणि रघुनन्दन यदुनन्दन गंगामणि लक्ष्मण

प्राणमणि के पुत्र:
उपेन्द्रहरि भवदत्त आदिनाथ

चूड़ामणि

प्रजापति दामोदर मधुसूदन

रघुनन्दन
गोवर्द्धन आदि

यदुनन्दन
|
एकनाथ आदि

गंगामणि
|
वीरेश्वर आदि

मणीराम
|
मनोरथ बलभद्र लालमणि मित्रानन्द महामुनि

प्रथम तीनो पहली स्त्रीसे और शेष दोनो दूसरी स्त्री भानुमतीसे जन्मे थे ।

गोपीनाथ
|
पीताम्बर गौरीनाथ भानुदत्त

मथुरानाथ
वा
मथुरापति
|
लक्ष्मीनाथ कृष्ण मणिकृष्ण विश्वम्भर

वाजपेयि महाशर्मके कनिष्ठपुत्र
गदाधर
|
तिर्मल गंगाराम

तिर्मल

भागीरथ सोमेश्वर

गंगाराम

कृपाराम

खटोला ग्राम और साहिपुरमें बसे।

स्वराट् सम्राड् वाजपेयि विष्णुशर्म

हरदेव ओझा वा हरिहर

बलभद्र

लक्ष्मण वा लक्ष्मीनिधि

शिवशर्म काशी

देवशर्म

हरिकेशव

दोनो बाजपेयीपुर वा बाजपेयीखेड़ेमें पुत्र पौत्रों सहित बसे।

छंगे गंगे

कृष्ण अग्निहोत्री

टीका जयकृष्ण

प्रीतिकर रामभद्र

पृथ्वीधर हीरा वा पीथा

बीशा

धरणीधर वा धन्नी

तारापति

(ये पाँचो सन्तानादि समेत साहिपुरमें बसे।)

बालकृष्ण कमलनयन हेमनाथ लक्ष्मण

बुधकृष्ण

सन्त वसन्त

सिंहमणि भोलानाथ

सिंहमणि
वसन्त
कालिदास
वेणी प्रसाद
तुलसी
गुलाल
मुरलीधर
राम
परमेश्वर
श्रीकृष्ण
ईश्वरनाथ
शीतल
राधेकृष्ण
प्रेम
फेरू
जयकृष्ण
ऋषिनाथ
हुलास
(शाहाबादमें
बसे)
रेवतीराम
छोटकू
(मुहम्मदपुरमें
बसे)
मेड़ेलाल
सुखान
वेणीदीन
कुंजमणि
श्रीकृष्ण
कृष्णकुमार
रामकृष्ण
शालग्राम
दयाराम
इच्छाराम
माधवराम
रामनारायण
नन्दकिशोर
हरिनारायण

माधवराम
अमरनाथ
बाबू देबीसहाय
रामनारायण
बेचू
(असनीमें)
नन्दकिशोर
गोपाल साँवले गयादत्त
हरिनारायण
जगन्नाथ
गंगाप्रसाद
सीताराम रामसहाय बैजन
शालग्राम
मणिराम गोबिन्द
दुर्गादत्त
कमलनयन
यज्ञदत्त शम्भुनाथ गौरीशंकर
प्रीतिकर दीक्षित सोमयाजी
रामचन्द्र बुद्धिशर्मा वेणीदत्त गणपति नरहरि पीताम्बर
धर्मनारायण रामनारायण हरिनारायण घूरे ऋषण विश्वनाथ
छीती वा छोट्टू
शुभङ्कर

शुभङ्कर
चूड़ामणि
गुलाल
राधाकृष्ण
दयाकृष्ण
वासुदेव
गुमानी
गोविन्द
आनन्द
बुद्धिशर्मा सोमयाजी
लाल
लक्ष्मण
भीखू
लोकमणि
शंकर
मणीराम
नन्दराम
वंशीधर
शिवनाथ
सर्वसुख
मनसुख
(अपुत्र)
विश्वनाथ
समाधान
नेवाजीलाल
शिवप्रसाद
आदिनाथ
शङ्कर

विश्वनाथ
सङ्गम
(भगवन्तनगरमें बसे ।)
रामकृष्ण
द्वारकानाथ
समाधान
शीतल
रामदत्त
राधाकृष्ण
प्रयाग
रामेश्वर
साहेबलाल
श्यामलाल
मनसाराम
स्थानेश्वर
श्यामलाल
जवाहिरलाल
मुन्नालाल
मानूलाल
कालिका
हरसहाय
मनसाराम
मंगल
स्थानेश्वर
निद्धी
सिद्धी
गणेश
आनन्दी
गंगाविष्णु

शिवशंकर

- गोकुलप्रसाद
  - रघुनन्दनलाल
  - काशीप्रसाद
    - बदरीप्रसाद
- गंगाप्रसाद
  - उमादत्त
  - क्षमापति

शिवदयाल

- मदनगोपाल
- सिद्धगोपाल
  - शिवमगन (माना)
    - जयदेवप्रसाद
      - छेदालाल
      - विश्वेश्वर

तेजनाथ
|
वैद्यनाम
|
माखन
|
सागर
|
शिवबक्ष

जीवलाल
जयसुख चिरंजीव परमानंद निजानंद
कनौजीलाल युगराज वा यागेश्वर
सांवलेप्रसाद विश्वेश्वरनाथ शिवदत्त
रामरत्न गयाप्रसाद
गंगाप्रसाद यागेश्वर चन्द्रिका हरनारायण
विश्वेश्वरनाथ
लालबिहारी माधवप्रसाद रामकृष्ण रामदत्त
सतीप्रसाद बद्रीप्रसाद बबुआ
वैकुण्ठनाथ बिल्ला
मूलचन्द
चिरंजीव
ठाकुरप्रसाद भोलानाथ

ठाकुरप्रसाद
बदरीनाथ शिवराम शालग्राम
भोलानाथ
गदाधरप्रसाद
नारायणप्रसाद गंगाधर
यशोदानन्दन (बब्बू) गुरुप्रसाद दुर्गासहाय मोहन
अनन्तराम
कृष्णदत्त हरदत्त
हरनन्दन
शालग्राम
बदरीनाथ केदारनाथ सुन्दर
चूड़ामणि
सुखलाल हरीलाल हरगोविन्द
लालमणि मोहनलाल काशिनाथ मोतीलाल वेणीलाल
फेरूलाल
प्रेमनाथ हीरानन्द महानन्द
बुद्धिलाल गंगाधर

हीरानन्द

राखन — वासुदेव — श्रीपति — कालिका प्रसाद — भैरवप्रसाद (तात्या), बलदेवप्रसाद (दुल्लू)

वासुदेव — लक्ष्मीपति

ढाकन — कन्हैयालाल (अघोरी हुए ।) — ललिताप्रसाद — अम्बाप्रसाद

महानन्द
श्रीकृष्ण
हरिकृष्ण
दुर्गाप्रसाद
यागेश्वर
महेश्वर
सिद्धेश्वर
पुरुषोत्तम (टैयां)
शिवशंकर (मिल्ली)
हरिशंकर (कुदन)
विश्वनाथ (बब्बन)
सोमनाथ (दुल्लर)
कैलासनाथ
पृथ्वीनाथ (अल्पायु)
अमरनाथ
ओंकारनाथ
रवीन्द्रनाथ
देवेन्द्रनाथ
सोमनाथ
रामनाथ
लोकनाथ
बैजनाथ
केदारनाथ
कामतानाथ
द्वारकानाथ
कुबेरनाथ
विश्वेश्वरनाथ

हरिकृष्ण

वीरेश्वर

चन्द्रमौलि (चन्दा)
चन्द्रशेखर
भगीरथ
रघुनाथ (रग्घो)
मुक्ताप्रसाद (अप्पा)
राजनारायण (मगरा)
इन्द्रनारायण (बांके)
रामनारायण
लक्ष्मीनारायण
सूर्यनारायण
दुर्गाप्रसाद
श्याममनोहर
शीतलाप्रसाद
रमाशंकर
गिरिजाशंकर
शारदाशंकर
उमाशंकर
दुर्गाशंकर
कात्यायनी शंकर
महेश्वर
गौरीशंकर (गोरा)
सोमेश्वर (मंगलके लड़केको गोद लिया)
(मानू)

सोमेश्वर (मानू)
मथुरा (मुल्लू)
अनन्तराम (अनन्तू)
विद्यासागर
गोपीनाथ
श्रीनाथ
जगत्नारायण
तेजनारायण
शिवनारायण
विष्णुनारायण
यागेश्वर
मंगलप्रसाद
बुद्धा
जवाहिर
सोमेश्वर (मानू)
(गौरीशंकरके
गोद गये।)
प्रेमेश्वर
(गुल्ली)
वृन्दावन (गट्टू)
मोहनलाल
शिवानन्द
सदानन्द
ब्रह्मानन्द
जानकीनाथ
रामचन्द्र
केवलकृष्ण
केदारनाथ
मुकुन्दलाल
गोविन्दप्रसाद
मदनमोहन
कन्दर्पनारायण
(बब्बू)

मदनमोहन
शंकरदत्त (बब्बन)
हरिप्रसाद (लाला)
भुवनेश्वरीप्रसाद
योगेश्वर
विश्वेश्वर
सत्येश्वर
कन्दर्पनारायण (बब्बू)
(कामदाप्रसाद) मूलनारायण
प्रतापनारायण (मुन्ने)
प्रेमनारायण (बबुआ)
रमेश
उमेश
अम्बिकाप्रसाद
तेजनारायण (कुन्नू) (जवानीमें शरीरान्त।)
फणीन्द्रनारा०
क्षेमेन्द्रनारा०
उपेन्द्रनारा०
रामेन्द्रनारायण
केवलकृष्ण
रघुवरदयाल
भगवान्दत्त
दामोदर
नीलकंठ
संगम
राधावर
ब्रजनाथ
शिवदयाल
हजारीलाल
शिवप्रसाद
मैकूलाल
ब्रह्मदत्त
प्यारेलाल
श्रीनिवास (अल्पायु)
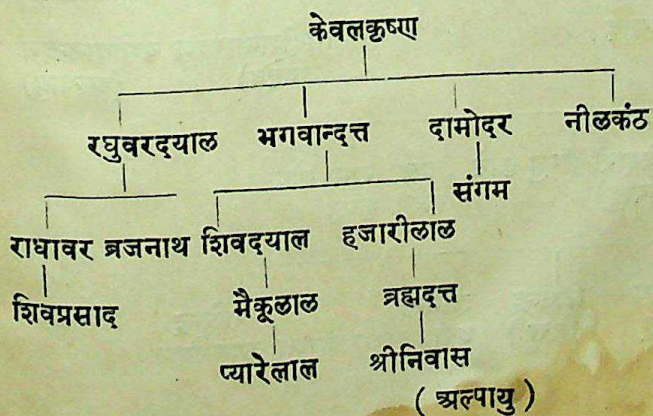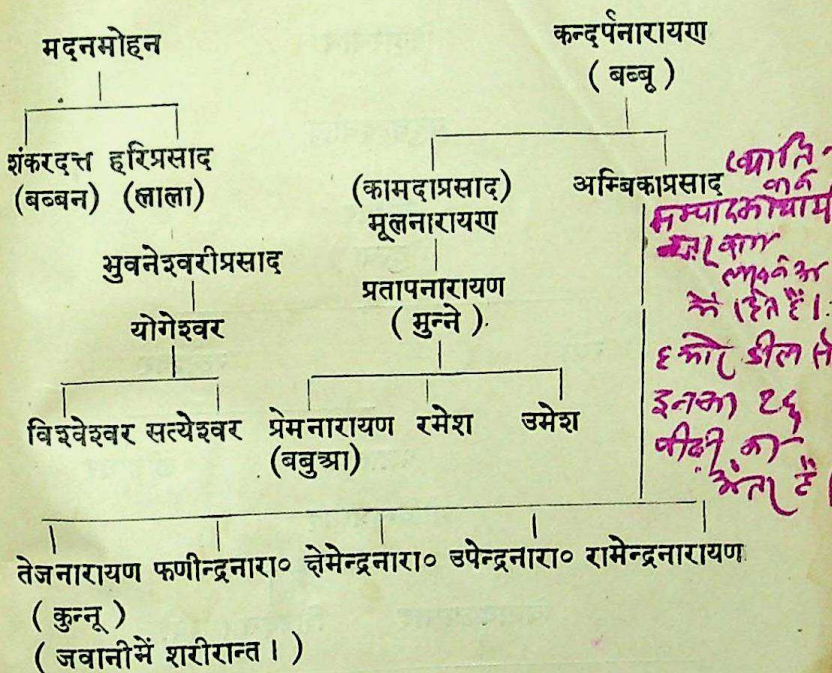
केदारनाथ
यदुवरदयालु
उमावर
(दुन्ना)
रमा
रत्नेश्वर
पन्नालाल
लीलाधर
गोविन्दप्रसाद
विनायकप्रसाद
शिवदत्त (सुधौ)
देवीप्रसाद
जगदीशनारायण
(जगद्देव)
यशोदानन्दन
(अल्पायु)
शिवविहारी
(अल्पायु)
शम्भु
छोटे
बाल कृष्ण
राम कृष्ण
गोपाल
भवनाथ
(भुन्नू)
जितेन्द्र
(जित्तू)
ज्ञानेन्द्र
श्याममोहन
बबुआ
कृष्णमोहन
राजेन्द्र
रवीन्द्र
महेश

उपमन्युवंशवृक्ष
काशिनाथ
परमकृष्ण
तनसुख (केशवराय)
घनश्याम
विष्णुदत्त
हरिनाथ
बलभद्र (बलिया)
हरदेव (ओझा)
देवदत्त (पुरन्दरकवि)
हरिहरदत्त
गिरीशदत्त
इंदिरादत्त
मुरलीधर*
सुदर्शन
विद्यापति
क्षमापति
* थलईके दीक्षित सीताराम जिन्होंने ब्रह्मर्षि नामसे
अपनेको मुन्द्रासनके मुरलीधर वाजपेयीका
शिष्य और पोष्यपुत्र प्रसिद्ध किया—
ब्रह्मर्षि
देवदत्त
देवव्रत
शिवदत्त
ब्रह्मदत्त
शिवकुमार
कृष्णकुमार
गणेशदत्त
बुद्धिदत्त
(दिवोदास)
गणेशदत्त
(देवव्रतकी गोद)
गिरिजादत्त
महेशदत्त

मुरलीधर
सुदर्शन
विद्यापति
क्षमापति
पुण्यदत्त
भजनलाल
(भवशर्मके लड़केको
गोद लिया।)
देवशर्म
यज्ञदत्त
कालीदत्त
कृपाशंकर
करुणाशंकर
बब्बन
(जवानीमें
मरे।)
कामेश्वर
(कल्लू)
त्रिवेणीदत्त
(बेनी)
विश्वेश्वर
(बिस्सू)
भवशर्म
(भाऊ)
पुत्तन
भुवनेश्वर (भुन्दा)
दिगम्बरनाथ
कैलासचन्द्र
शिवनाथ
बच्चन
ज्ञानेश्वर
तारकेश्वर
नीलेश्वर
वृन्दावन
(अल्पायु)
अमरनाथ
छनकू
भजनलालने गोद लिय